कहानियों की सूची

संसार की प्रसिद्ध कहानियाँ

डाक्टर हिडेगर का प्रयोग

वयोवृद्ध डा० हिडेगर बड़े विचित्र मनुष्य थे। इनकी विचित्र प्रकृति के विषय में हज़ारों क़िस्से मशहूर थे। इनमें कुछ किंवदन्तियों का कारण तो शायद मुझ गप्पी को ही बनाया जाय—जो मुझे शर्म दिलाने को काफ़ी है—अतः प्रस्तुत कथा के किसी भाग से यदि विश्वासी पाठक सहसा शङ्कित हो उठें, तो क्या करूँगा; लाचार गपोड़चन्द होने का इलज़ाम अपने सिर पर लूँगा।

चारों मेहमानों ने जब डाक्टर साहब के प्रयोग की तजवीज़ सुनी, तो वह समझ गये कि बस ज़्यादा से ज़्यादा यही होगा कि हवा के पम्प में किसी चूहे की हत्या की जायगी या ऐसी ही कोई और ऊट-पटाँग बात होगी जिनसे कि डाक्टर महोदय अक्सर अपने मित्रों को परेशान करते रहे हैं। किन्तु बिना उक्त सज्जनों के उत्तर की प्रतीक्षा किये डा० हिडेगर हड़बड़ाकर उठे और कमरे के दूसरे कोने से जाकर वही काले चमड़ेवाली भारी सी पुस्तक उठाकर लाये जो सर्व-सम्मति में जादू की किताब मानी जाती थी। उसके चाँदी के क़ब्ज़े ढीले करके उन्होंने उसे खोला, और जन्त्र-मन्त्र से भरे हुए पृष्ठों के बीच में से एक गुलाब का फूल, यानी जो कभी एक गुलाब का फूल था, निकाला; इस समय तो उसकी पँखुड़ियाँ और हरे पत्ते सभी एक बादामी से रंग के हो गये थे, जान पड़ता था कि डाक्टर साहब के हाथ में अभी धूल-से होकर बिखर पड़ेंगे।

"यह गुलाब का फूल," एक आह भरकर डा० हिडेगर ने कहा, "यह सूखा हुआ फूल जो अब बिखरा ही चाहता है, अबसे पूरे पचपन साल हुए, जब खिला था। इसे मुझे सिल्विया वार्ड ने दिया था, जिनका तैल-चित्र वह लटका हुआ है; विवाहोत्सव पर, मैं इसे सामने अपने सीने पर, लगानेवाला था। पूरे पचपन वर्ष से यह विभूति इसी प्राचीन पोथी के पन्नों में सुरक्षित है। अब क्या आप सम्भव समझते हैं कि यह अर्ध-शताब्दी पुराना गुलाब का फूल फिर खिल सकेगा?"

"हुँह! क्या बेकार की बातें!" कुछ तुनुकमिजाजी से बेवा साहबा वाइचरली ने सर को जरा झटका सा देते हुए कहा— "यही कहिए न, कि भला किसी बुढ़िया का झुर्रियोंदार चेहरा फिर यौवन से खिल सकता है!"

"अच्छा देखिए!" उत्तर में डाक्टर हिडेगर ने कहा।

उन्होंने फूलदान का ढकना हटाया और मुरझाये हुए गुलाब को उसके अन्दर पानी में डाल दिया। पहले तो वह पानी की सतह के ऊपर ही पड़ा रहा और जरा भी नमी खींचता हुआ मालूम नहीं हुआ। पर शीघ्र ही एक विलक्षण परिवर्तन देखने में आया। दबी पिसी हुई सी सूखी पँखड़ियाँ हिलीं और ललाई पर आ गईं, जो गहरी होती जा रही थी, मानो वह फूल मृत्यु की निद्रा से उठकर नया जन्म ले रहा था; पत्तों के कोमल वृन्त हरे हो गये; और सामने अर्ध शताब्दी का गुलाब वैसा ही तरो-ताजा मौजूद था, जैसा कि आरम्भ में उस समय जब सिल्विया वार्ड ने इसे अपने प्रेमी को दिया था। यह अभी अच्छी तरह विकसित भी नहीं हुआ था, क्योंकि दो-चार नाजुक-नाजुक लाल पत्ते अभी इसके भीगे वृन्त के चारों ओर लाज से लिपटे हुए थे, और दो-तीन ओस की बूँदें उसके अन्दर द्युतिमान् थीं।

"क्या उम्दा सफ़ाई है, निःसन्देह !" लापरवाही से डाक्टर साहब के दोस्तों ने कहा। जादूगर के तमाशों में उन्होंने इससे कहीं अजीब-अजीब करिश्मे देखे थे। "लेकिन जनाब यह हो किस तरह गया ?"

"आपने कभी 'यौवन के निर्झर' के विषय में सुना है ?" डा० हिडेगर ने पूछा, "जिसकी खोज में स्पेनिश खोजी पाँस दे लियाँ दो या तीन शताब्दी हुए गया था।"

"तो फिर पाँस दे लियाँ को वह झरना मिल गया था क्या ?" बेवा साहबा वाइचरली ने पूछा।

"नहीं"—डाक्टर हिडेगर ने उत्तर में कहा, "कारण, कि उसने ठीक स्थान पर उसे कभी नहीं ढूँढ़ा। अगर यह समाचार मुझे ठीक मिला है, तो वह प्रसिद्ध 'यौवन का निर्झर' फ्लोरिडा प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग में स्थित है और माकामो नामक झील से अधिक दूर नहीं पड़ता। जहाँ इसका स्रोत है वहाँ कई एक बड़े-बड़े मैगनोलिया वृक्षों की छाया फैली है। ये वृक्ष न जाने कितनी शताब्दी पुराने हैं पर आज भी वह चम्पा की तरह फूल रहे हैं; यह वहाँ के आश्चर्यजनक पानी की करामात है। इन विषयों में मेरी जिज्ञासा को देखकर मेरे एक मित्र ने मुझे यह भेजा है जो आप लोग इस फूलदान में देख रहे हैं।"

कर्नल किलिग्रू को डाक्टर के एक शब्द पर भी विश्वास नहीं हुआ। खाँस कर उन्होंने पूछा, "अच्छा, तो मनुष्य के शरीर पर इसका कैसा असर होगा ?"

"आप स्वयं ही इसकी जाँच कर लें, कर्नल साहब !" डा० हिडेगर ने जवाब दिया, "माननीय मित्रो, इस जल में से [illegible]लने से भी आप को पूर्ण यौवन की प्राप्ति हो जाय उतना [illegible]प सब बड़ी खुशी से ले सकते हैं। मुझे तो बुढ़ापे की उम्र

तक पहुँचने में ही इतना कष्ट हुआ है कि अब फिर जवान होने की मुझे जल्दी नहीं। अस्तु, आप लोगों की आज्ञा हो तो मैं केवल इस प्रयोग की प्रगति को ही देखता रहूँ।"

यह कहते हुए डा० हिडेगर चारों शैम्पेन-गिलासों में 'यौवन के निर्झर' का पानी भरते भी जा रहे थे। मालूम होता था कि उस पानी में कोई उड़नेवाली गैस मिली हुई थी, क्योंकि गिलासों के तल से छोटे-छोटे बुलबुले मोती की तरह झाग बनकर ऊपर आ-आ कर फूट रहे थे। और उस मादक पेय में से एक मधुर सुगन्ध निकल रही थी। अस्तु, वयोवृद्ध व्यक्तियों को सन्देह नहीं रहा कि अनुकूल शान्ति-प्रद गुण उसमें मौजूद हैं; यद्यपि साथ-साथ उन्हें इसके यौवन-प्रद गुणों पर एकदम विश्वास भी नहीं था, फिर भी तुरन्त उसका घूँट भरने को वे झुक गये! लेकिन डा० हिडेगर ने उनसे ज़रा क्षण भर रुक जाने की प्रार्थना की।

"मेरे माननीय पुराने मित्रो, इससे पूर्व कि आप लोग इसका पान करें," उन्होंने कहा, "अच्छा होगा कि आत्म-निर्देश के लिए आप लोग कुछ साधारण से नियम बना लें; पूरे जीवन का अनुभव आपके पीछे है, और अब दुबारा, आपको यौवन की आपदाएँ पार करनी हैं। विचारिए तो कि ऐसी विशेष अवस्था में भी अगर आप युग के नव-युवकों के लिए सद्गुण और सद्ज्ञान का आदर्श न बन सकें तो कितने पाप और लज्जा की बात होगी!"

जानते हुए कि अपराध के साथ प्रायश्चित्त पग-पग पर लगा हुआ है, और फिर धोखा खा जायँगे,—यह विचार ही इतना हास्यास्पद था कि डाक्टर साहब के वयोवृद्ध मित्र केवल एक हलकी सी दबी हुई हँसी हँस दिये, और कोई उत्तर नहीं दिया।

"तब, शुरू कीजिए!" जरा झुककर डाक्टर साहब ने कहा, "मुझे बड़ी खुशी है कि अपने प्रयोग के लिए मैंने इतने योग्य पात्रों को चुना है।"

अपने सूखे हाथों से उठाकर उन्होंने गिलासों को होठों से लगाया। सचमुच ही अगर उसमें ऐसा कोई विशेष गुण था, जैसा कि डा० हिडेगर वर्णन करते थे तो उसकी दारुण आवश्यकता इनसे अधिक और किन्हीं चार व्यक्तियों को नहीं हो सकती थी। जान पड़ता था मानो इन्होंने कभी नहीं जाना कि यौवन अथवा सुखैश्वर्य क्या है; मानो प्रकृति की वृद्धावस्था की ये सन्तान थे, और सदा से ही पके बाल अपाहिज-से दीनहीन प्राणी रहे थे, जो कि अब डाक्टर साहब की मेज की चारों ओर कमर झुकाये बैठे थे। इतनी जान भी उनके शरीर में, इतना सम्बल भी उनके मानस में अब नहीं था कि वे एक नये यौवन पाने की आशा से भी तो चेतन हो उठते। उन्होंने जल पी लिया, और गिलासों को मेजों पर रख दिया।

जो असर एक प्याला बढ़िया शराब का पी लेने पर न होता, इसमें शक नहीं, लगभग उसी क्षण वैसा ही प्रभाव मेहमानों की उन्नत चेष्टा में हुआ। एकदम प्रसन्नता की आभा से उन सबों के मुख-मंडल एक साथ चमक उठे। जिन रूखे गालों पर पहले मुर्दनी-सी छाई हुई थी, उन पर स्वास्थ्य का रङ्ग दौड़ गया। वे एक-दूसरे की ओर देखने लगे, और उन्हें लगा मानों अभी से किसी जादू की शक्ति ने उन करुण, गहरी रेखाओं को मिटाना शुरू कर दिया है जिन्हें पितामह काल उनके माथे पर इतने अर्से से अङ्कित करता आ रहा था। बेवा साहबा वाइ-थरली ने—कुछ ऐसा स्त्री-भाव उनके मन में उठा—अपने टोपे को सिर पर ठीक किया।

"यह अद्भुत जल हमें और दीजिए।" उत्सुकता से उन सबों ने कहा—"हम पहले से अब जवान हैं—फिर भी अभी बहुत बूढ़े हैं। जल्दी से हमें और दीजिए।"

डा० हिडेगर दार्शनिक भाव से शान्त स्थिर होकर अपना प्रयोग देख रहे थे। "धैर्य, जरा धैर्य!" उन्होंने कहा, "आपको बुढ़ापे तक आने में बहुत लम्बा समय लगा है। आधे घण्टे में जवानी पाकर तो निःसन्देह आपको सन्तोष करना चाहिए। जल तो आपकी सेवा में है ही।"

उन्होंने गिलासों को फिर यौवन के पेय से पूर्ण कर दिया। शहर के बूढ़ों की आधी तादाद को उनके पोते-परपोतों की उम्र का बना देने के लायक़ उस पात्र में अभी काफ़ी बच रहा था। गिलासों में लबालब झाग चमक रहे थे, कि डाक्टर साहब के मेहमानों ने झपटकर उन्हें मेज़ पर से उठाया और एक घूँट में सब पी गये। क्या यह भ्रम था?—गले से उतरते-उतरते उस पेय ने उनके सम्पूर्ण शरीर में एक परिवर्तन-सा कर दिया। उनके नेत्र साफ़ चमक उठे; उनके रजत-श्वेत केशों में एक गहरा कालापन घना होता जा रहा था; यानी आधी उम्र के तीन सज्जन और एक महिला, जिसने पूर्ण-यौवन से आगे अभी मुश्किल से क़दम रक्खा था, अब मेज़ के चारों ओर बैठे थे।

"प्यारी बेवा जान, तुम तो मोहे ले रही हो!" कर्नल किलिग्रू बोल उठे। इधर बेवा साहिबा के मुख-मण्डल से बुढ़ापे का धुँधलका-सा दूर होता जा रहा था, जिस प्रकार कि लालिमा के पूर्ण प्रभात से अन्धकार दूर होता है, और उधर कर्नल साहब की आँखें एकटक उस पर लगी हुई थीं।

बेवा साहबा यह शुरू से जानती थीं कि कर्नल किलिग्रू साहब किसी का प्रशंसात्मक अभिवादन करने में गम्भीर सत्य से बहुत कम काम लेते थे। अस्तु, वह आश्चर्य में उठीं और

दौड़कर आइने के सामने गई, पर दिल में यही खटका था कि वही बुढ़िया का-सा बदसूरत चेहरा दिखाई पड़ेगा। इधर तीनों महाशयों की हरकतों से यह साबित होता था कि इस यौवन-निर्झर के जल में कुछ नशे का-सा गुण भी था; अन्यथा यह दिलों की एक ताज़गी थी, तबीयत का सिर्फ़ एक हलकापन, जो यकायक बुढ़ापे का बोझ दूर हो जाने के कारण उनमें आ गया था। मि० गैस्काइन का मस्तिष्क तो राजनीतिक विषयों की ओर दौड़ता जान पड़ता था, पर इन विषयों का सम्बन्ध भूतकाल से था या भविष्य से, या वर्तमान से, इसका निश्चय आसानी से नहीं हो सकता, क्योंकि पचास वर्ष से एक ही तरह के विचार अब तक चले आ रहे हैं। अस्तु, अभी वह स्वदेश-प्रेम और राष्ट्रीय-वैभव और जनता के अधिकारों पर खूब ऊँचे स्वर में धड़ल्ले के साथ बोल रहे हैं, तो अभी चातुर्य-पूर्ण सन्देहात्मक रीति से किसी खतरनाक मामले पर इतनी सावधानी के साथ धीमे स्वर में कुछ ऐसा फुस-फुसाने लगे, कि उनकी अन्तरात्मा को भी इसकी मुश्किल से खबर लगे; फिर, इसके पश्चात, बड़ा भारी सम्मान प्रदर्शन करते हुए वह बात को ऐसा तोल-तोल कर बोलने लगे, मानो उनके सुथरे ढले हुए वाक्यों पर शाही कान लगे हुए हैं। इस सारे समय भर कर्नल किलिग्रू साहब शराबियों का एक चलता हुआ गीत उड़ाते रहे, और उसके सुर-नाद पर गिलास को बजा-बजा कर ताल देते रहे; पर उनकी आँखें वाइचरली के सुगठित शरीर पर रीझती रहीं। मेज़ के दूसरी ओर मिस्टर मेडबोर्न अपने डालर और सेण्ट के हिसाब में उलझे रहे; इस हिसाब के साथ ही एक योजना भी बड़ी अजीब रीति से मिली हुई थी, जिसके अनुसार ह्वेल मछलियों द्वारा खिंचवाकर ध्रुव-प्रदेशों के बर्फ़ीले टीलों को ईस्ट इंडीज़ तक पहुँचाया जायगा।

उधर वेवा वाइचरली आईने के सामने खड़ी-खड़ी अपने प्रतिबिम्ब के साथ झुक-झुककर कुछ हँस-बोल-सा रही थीं, मानों सारी दुनिया से बढ़कर प्यारे अपने किसी दोस्त से भेंट रही हों। आईने से अपने मुँह को एकदम मिलाकर वह देखने लगीं कि उनके चिर-परिचित मुहाँसे या झुर्रियाँ सचमुच ही गायब हो गई हैं या नहीं। क्या बालों की सफ़ेदी एकदम ऐसी उड़ गई है कि बुज़ुर्गाना टोपे को अब इत्मीनान के साथ अलग कर दिया जा सकता है? इस बात की उन्होंने जाँच की। आख़िरकार वह फ़ुर्ती के साथ मुड़ीं और अपनी चाल में एक नृत्य-सा दिखाती हुई मेज तक वापस आईं।

"मेरे पुराने अजीज डाक्टर," अनुरोध करके उन्होंने कहा, "मुझे एक गिलास मेहरबानी करके और इनायत कीजिए।"

"हाँ-हाँ, बी साहबा, जरूर!" डाक्टर साहब ने जवाब दिया, "देखिए मैंने पहले ही सब गिलास भर दिये हैं।"

वास्तव में चारों गिलास इस अद्भुत जल से ऊपर तक भरे हुए रक्खे थे। हवा में टूटते हुए नन्हे-नन्हे झाग जल की सतह पर ऐसे मालूम होते थे जैसे हीरे की कनियाँ झिलमिला रही हों। अब दिन डूबने ही वाला था। अस्तु, कमरे में जो अँधेरा-सा था वह और बढ़ गया। लेकिन फूलदान से निकलकर एक हलकी चाँद की-सी आभा डाक्टर साहब की वयोवृद्ध-आकृति पर तथा चारों मेहमानों पर पड़ रही थी। ओक लकड़ी की ऊँची पीठवाली बेहद नक्क़ाशीदार कुर्सी पर इतने शान्त गम्भीर भाव से डाक्टर साहब बैठे थे मानों स्वयं उस पितामह समय की मूर्ति हों कि जिसकी गति को सिवा इन भाग्यशाली व्यक्तियों के और कोई नहीं रोक सका। वे यौवन-निर्झर के जल का तीसरा गिलास चढ़ाते समय भी उसकी रहस्य-पूर्ण मुखाकृति को देखकर स्तंभित-से रह गये।

पर दूसरे ही क्षण नव-यौवन की लहर उनकी नसों में दौड़ गई। अब तो उनकी ऐन जवानी का सुखी युग था। बुढ़ापे की दारुण यातनाएँ और दुःखों और बीमारियों का क्रम मानों किसी दुःस्वप्न की पीड़ा थी, जिससे वे अब जागकर प्रसन्न थे।

वह अन्तर का दिव्य तारुण्य, जो इतने पहले खोया जा चुका था, और जिसके न होने पर संसार का सारा बाद का घटना-चक्र धुँधले चित्रों का एक प्रदर्शन मात्र हो गया था, उसने उनकी अभिलाषाओं को अब फिर अपने जादू से चमका दिया। उन्हें लगा मानों वे एक नई दुनिया के नये प्राणी हैं।

बावले-से होकर वे चिल्ला उठे—"हम जवान हैं! हम जवान हैं!"

एक दूसरे से अधेड़ उम्र में जो गहरे भेद रहते हैं उन्हें बुढ़ापे का आख़िरी समय जिस प्रकार दूर कर देता है उसी तरह यौवन ने सब भेद-भाव मिटाकर सबों को एक समान कर दिया। अब तो यह मस्त जवानों का एक चौगड्डा था जो छेड़खानी की मादक उम्र पाकर उन्मत्त हुआ जा रहा था। उनके मज़ाक़ ने एक अनोखा रङ्ग यह पकड़ा कि उन्हें बुढ़ापे की अपाहिज और निःशक्त अवस्था की दिल्लगी उड़ाने की सूझी, जिसके कि वे कुछ देर पहले स्वयं शिकार रह चुके थे। अपने पुराने फ़ैशन के वस्त्रों पर, अपने युवक-तन पर पड़े हुए चौड़े घेरे के कोट और ढीली-ढाली वासकटों पर, और युवती के प्राचीन टोपे और गाउन पर वे ख़ूब ठठा कर हँसे। एक साहब गठिया वाले बूढ़े बाबा की तरह लँगड़ाकर चलने लगे, और एक साहब आँखों पर ऐनक जमाकर जादूवाली पुस्तक का मानों अध्ययन ही करने के लिए उसके जन्त्र-मन्त्र से भरे पत्रों पर झुक गये। तीसरे साहब एक कुर्सी पर बैठ गये और बुज़ुर्ग डाक्टर हिडेगर की गम्भीर मुद्रा की नक़ल करने की चेष्टा करने लगे। इसके

बाद .खुशी के मारे वे सब शोर करते हुए कमरे भर में नाचने लगे। बेवा साहबा वाइचरली तो—अगर ऐसी नव-यौवना को हम बेवा के नाम से पुकार सकते हैं—खट-खट करती हुई डाक्टर साहब की कुर्सी तक पहुँचीं; उनके गुलाबी चेहरे से दिल्लगी और शरारत टपकती थी।

"अजी मेरे प्यारे बूढ़े डाक्टर", उन्होंने पुकारकर कहा, "उठो, उठो अब, और मेरे साथ नाचो!" और इस पर, यह सोचकर कि विचारा बूढ़ा डाक्टर कैसा अजीब लगेगा, चारों जनों ने ज़ोरों से क़हक़हा लगाया।

"मुझे कृपया क्षमा करो", डाक्टर साहब ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया, "मैं बूढ़ा आदमी, मुझे गठिया की शिकायत, मेरे नाच-खेल के दिन मुद्दत हुई गुज़र गये। लेकिन ये .खुशदिल नौजवान हैं, इनमें कोई भी आप जैसी सुन्दरी का साथ देने को .खुशी से तैयार हो जायँगे।"

कर्नल किलिग्रू एकदम बोल उठे, "मेरे साथ नाचो, क्लैरा!"

"नहीं, नहीं, इनका साथी मैं होऊँगा!" ऊँची आवाज़ से मि० गैस्क्वाइन ने कहा।

मिस्टर मैडबोर्न ने घोषित किया कि "पचास साल पूर्व तो मेरे साथ इन्होंने शादी का वादा किया था!"

सबों ने उसे घेर लिया। एक ने अपनी गर्म मुट्ठी में उसके दोनों हाथ ले लिये—दूसरे ने उसकी कमर में अपने हाथ डाल दिये—तीसरे ने अपने हाथों को उन चमकती हुई .ज़ुल्फ़ों का गिरफ़्तार बना दिया जो बेवा साहबा के टोपे में से घनी-घनी निकली हुई थीं। और स्वयं वह, इस कशमकश में शर्म से झेंपती हुई, लम्बी-लम्बी साँसें लेती, झिड़कियाँ भी देती और हँसती भी जाती थी। उसकी गर्म साँस बारी-बारी सबों के मुँह पर

लगती थी। इस प्रकार वह अपने आपको उनसे छुड़ाने की कोशिश करती हुई भी उन तीनों की गोद में फँसी रही। एक कमनीय सुन्दरी के लिए यौवन का ऐसा प्रतिद्वन्द्व कभी न हुआ होगा। तथापि, कुछ तो कमरे के धुँधियाले के कारण और कुछ इन व्यक्तियों के बुढ़ापे के वस्त्रों के कारण, जो वे अभी तक पहने हुए थे, एक ऐसा विचित्र भ्रम पैदा हुआ कि उस कमरे के बड़े आइने में इस समय जो प्रतिबिम्ब पड़ रहा था, वह कहा जाता है कि तीन बूढ़े श्वेत-केश बे-जान से पितामहों का था जो उपहास-जनक रूप में एक हड्डी बदसूरत सूखी-सी बुढ़िया के लिए लड़ रहे थे।

हाँ, पर थे वे जवान; क्योंकि उनकी वासनाएँ उन्हें जवान ही साबित कर रही थीं। उस विधवा लड़की की नाजो-अदा से उत्तेजित और मदांध होकर—क्योंकि वह युवती न तो किसी को सन्तुष्ट ही करती थी और न अपनी कृपा से एकदम वञ्चित ही—तीनों प्रतिद्वन्द्वी एक-दूसरे पर आँखें निकालने लगे। नायिका को बीच में ही किये हुए उन्होंने निर्दयता के साथ एक दूसरे की गरदनें दबोच लीं। इस धींगा-मुश्ती में वे कभी आगे कभी पीछे खिसक रहे थे; इससे मेज उलट गई, और फूलदान टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो गये। यौवन-निर्झर का क़ीमती जल र्श पर चमकता हुआ वह चला। गर्म धूप के चले जाने पर शिथिल होकर एक तितली आकर वहीं कहीं मरने के लिए बैठ हुई थी; उसके पर भीग गये। तुरन्त वह कोमल गति से मरे में उड़ी और जाकर डाक्टर हिडेगर साहब के हिम-श्वेत सर पर बैठ गई।

"बस, बस, सज्जनो!—बस, मैडम वाइचरली!" डाक्टर साहब बोल उठे,—"मैं इस हुल्लड़ का अवश्य ही विरोध करूँगा!"

1340

वे सब सन्न होकर खड़े हो गये, और उन्हें सिहरन-सी मालूम हुई; जान पड़ा मानो वयोवृद्ध काल यौवन की सुख-धूप में से उन्हें अपनी बरफ़ीली अन्धकारमय घाटी में बुला रहा हो। उन्होंने बुज़ुर्ग डाक्टर हिडेगर की ओर देखा जो अपनी नक्काशीदार कुर्सी पर बैठे हुए थे; हाथ में वही अर्धशताब्दी पुराना गुलाब का फूल था जिसे उन्होंने टूटे हुए फूलदान के टुकड़ों में से एहतियात के साथ बचा लिया था। हाथ का एक इशारा पाते ही चारों इन्द्रियों ने अपनी-अपनी जगह सँभाली; कुछ इस कारण और भी कि, यद्यपि वे जवान थे, पर अपने उत्तेजित शारीरिक प्रयास के कारण वे अब थक भी गये थे।

"बेचारी मेरी सिल्विया का गुलाब !"—फूल को शाम के बादलों की अरुण आभा में ऊँचा उठाकर डा० हिडेगर ने कहा—"यह फिर मुरझाता हुआ जान पड़ता है !"

फूल सचमुच मुरझा रहा था। सबों के देखते-देखते फूल सिकुड़ता चला गया; आख़िरकार वह फिर वैसा ही सूखा और कमज़ोर हो गया जैसा कि डाक्टर साहब ने फूलदान में पहले-पहल डाला था। इसकी पँखड़ियों पर जल की दो-चार बूँदे जो पड़ी हुई थीं उनको हिलाकर उन्होंने गिरा दिया।

"मुझे इस दशा में भी यह वैसा ही प्यारा है जैसा कि तरो-ताज़गी की हालत में था", डाक्टर साहब ने फ़रमाया, और वह सूखा हुआ गुलाब अपने सूखे हुए होंठों से लगा लिया। वह बोल ही रहे थे कि उनके सफ़ेद बालों पर से अस्थिर होकर तितली नीचे गिरी और फ़र्श पर आ पड़ी।

मेहमानों को फिर ठिठुरन मालूम हुई। एक अजीब-सी ठण्ड, जाने शारीरिक थी कि मानसिक, धीरे-धीरे उनके अन्दर समाती जा रही थी। वे आश्चर्य से एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। उन्हें लगा कि प्रत्येक अस्थिर क्षण अपनी गति के साथ

उनका कुछ न कुछ आकर्षण हरे लिये जा रहा है, और जहाँ पहले एक भी रेखा नहीं थी वहाँ झुर्रियाँ गहरी होती जा रही हैं। क्या यह भ्रम था? क्या एक पूरे जीवन-काल का परिवर्तन इतनी ज़रा-सी देर में घटित हो गया था और अब वे चार बूढ़े व्यक्ति फिर अपने पुराने दोस्त डा० हिडेगर के साथ बैठे हुए थे?

"क्या हम फिर इतनी जल्दी बूढ़े हो गये?" वे करुण स्वर में बोल उठे।

वास्तव में वे हो गये थे। यौवन-निर्झर के जल का प्रभाव तो मदिरा से भी अधिक क्षणिक था। इसकी बदहोशी अब सब उड़ चुकी थी। हाँ, वे अब फिर वृद्धावस्था में थे। विधवा ने काँप कर, भावावेश में जिससे कि अब भी उसका स्त्रीपन स्पष्ट होता था—अपने दोनों सूखे हाथों से मुख ढक लिया और हृदय से आह की, कि जो अब इनको सुन्दर नहीं रहना था तो तो इन पर कफ़न क्यों न पड़ गया।

"दोस्तो, यह सच है, कि आप लोग अब फिर बूढ़े हो गये हैं।" डा० हिडेगर ने कहा, "और यह देखिए, यौवन-निर्झर का सारा जल भूमि पर बिखरा पड़ा है। ख़ैर, मुझे इसका अफ़सोस नहीं है। क्योंकि आज आप लोगों ने ऐसा सबक़ मुझे दिया है, कि यह झरना मेरे द्वार पर भी अगर झरता होता, तब भी मैं अपने होंठ उससे तर न करता—कदापि न करता, नहीं, चाहे इसकी बदहोशी थोड़े से क्षणों के लिए नहीं, वर्षों के ही लिए क्यों न होती।"

लेकिन स्वयं डाक्टर साहब के दोस्तों ने ऐसा कोई सबक़ नहीं सीखा। उन्होंने फ्लोरिडा की यात्रा का उसी क्षण निश्चय कर लिया, कि वहाँ जाकर सुबह दोपहर और शाम, तीनों काल, यौवन-निर्झर का जल पिया करेंगे।

उच्चाकांक्षा

सितम्बर की रात थी। एक कुनबा दीवार में लगी हुई अँगीठी के आगे बैठा आग ताप रहा था। पहाड़ी नदियों से बहकर आई हुई लकड़ियों, चीड़ की सूखी टहनियों और ढाल के बहाव में टूटकर आये हुए पेड़ों के चिरे हुए लक्कड़ों का ऊँचा-सा ढेर अँगीठी में लगा दिया था। धूँएदान के ऊपर तक शोले उठ-उठ जाते थे, कमरा आँच से रोशन हो उठा था। माता-पिता के गम्भीर मुख प्रसन्न थे। बच्चे हँस रहे थे। सब से बड़ी लड़की तो मानों सत्रह वर्षों की पूरी प्रसन्नता की मूर्ति थी; और वयोवृद्ध दादी, जो कोने में बैठी हुई कुछ बुन रही थीं, प्रसन्नता के बुढ़ापे की मूर्ति थीं। न्यू इँगलैंड के ऐसे सुनसान स्थल में भी सन्तोष और शान्ति की मानों कोई जड़ी-बूटी इस परिवार के हाथ लग गई थी। यह घराना ह्वाइट हिल्स श्रेणियों के नौश नामक दर्रे में बसा हुआ था। यहाँ वर्ष भर हवा बड़ी तेज़, और जाड़ों में तो बे-पनाह ठण्डक लिये हुए चलती है। इसका पहला क्रूर थपेड़ा, साको नदी की घाटी में नीचे पहुँचने के पूर्व, इसी मकान पर पड़ता था। बड़ी ठण्डी जगह थी, जहाँ ये लोग रहते थे, और बहुत खतरनाक भी। इनके सिर पर ही पहाड़ की चोटी एक दम सीधी खड़ी हुई थी; ढाल एकदम इतना सीधा था, कि रोड़े-पत्थर उस पर से अक्सर लुढ़कते रहते थे, जिनसे रात को ये लोग चौंक पड़ते थे।

बड़ी लड़की ने अभी ही कोई सरल सी हँसी की बात कही थी, जिसने अभी-अभी सब के दिलों को गुदगुदा दिया था। ठीक उसी समय नौश के दर्रे से आँधी का एक झोंका आया,

और उनके घर के आगे ही मानो ठहरकर किसी के रोने की और हूक मारने की-सी आवाज़ करता हुआ, दरवाज़ों को खड़-खड़ाकर फिर घाटी की तरफ़ नीचे चला गया। यद्यपि इस आवाज़ में असाधारण कुछ भी नहीं था, पर क्षण भर को तो सब उदास हो गये। पर, उसी क्षण, किसी यात्री ने चटकनी उठाई, और यह जानकर सारे परिवार का चित्त फिर प्रसन्न हो उठा। मगर पैरों की आहट उस भयावह तूफ़ानी झोंके में नहीं मालूम हो सकी, जो कि आगन्तुक के आगे ही आगे आया था और जो घर में उसके प्रवेश करते समय करुण ध्वनि करता हुआ विकल मन-सा द्वार के सामने से मुड़ गया।

यद्यपि ये लोग ऐसे निर्जन में रहते थे, पर संसार से उनका दैनिक सम्बन्ध बना हुआ था। नौश दर्रे का दुर्गम पथ तिजारत के लिए अच्छा खासा मार्ग है जिसमें होकर एक ओर मेन प्रान्त और दूसरी ओर ग्रीन गिरि प्रान्त तथा सेंट लारेंस के तटवर्ती भागों में खासा अन्तरप्रान्तीय व्यापार चलता रहता है। मुसा-फ़िरों की घोड़ा-गाड़ियाँ (कोचें) हमेशा इसी घर के सामने आकर रुकती थीं। पथिक जो केवल अपनी लाठी को अपना सङ्गी बनाये इधर से गुजरते, यहाँ रुककर दो-दो बातें कर लेते जिसमें दर्रे से गुजरते-गुजरते अथवा घाटी के पहले घर तक पहुँचते-पहुँचते अकेलेपन का हौल न उन्हें दबा ले। और यह गाड़ीवान पोर्टलैण्ड की पेठ को जाता हुआ रात को ठहर जाता, और अगर अविवाहित हुआ, तो समय से घण्टा भर और देर करके उठता, और बिदा के समय छिपकर इस स्थान की पहाड़ी बाला का एक चुम्बन लेता जाता। यह स्थान उन पुरानी ठहरने की जगहों में से था, कि जहाँ लोग भाड़ा तो केवल खाने और ठहरने का देते थे, पर आव-भगत ऐसी घर की-सी होती थी, जो किसी दामों में नहीं मिल सकती। अस्तु, भीतरी दरवाज़े और

बाहरी दरवाज़े के बीच में जब कोई आहट होती, तो सब बूढ़ी दादी और बच्चों के, घर भर उठ पड़ता, और इस प्रकार आगन्तुक का स्वागत करता मानों वह उनके कुनबे का ही कोई प्राणी और क़िस्मत का साझेदार हो।

दरवाज़ा एक नवयुवक ने खोला था। उसके मुख पर पहले तो कुछ दुःख बल्कि निराशा का-सा भाव था, जैसा कि अकेले दिन छिपे जङ्गल के सुनसान पथों पर चलनेवालों के मुख पर रहता है, पर शीघ्र ही अपना हार्दिक स्वागत देखकर प्रसन्न-वदन हो उठा। बुढ़िया से लेकर, जो अपने दामन से एक कुर्सी झाड़ने लगी थी, उस बच्चे तक, जिसने उसकी ओर अपने हाथ बढ़ा दिये थे, सब को भेटने के लिए उस पथिक का हृदय ललक उठा। एक कटाक्ष और मुस्कराहट ने परदेसी तथा घर की बड़ी लड़की के बीच में एक सादा-सी बेतकल्लुफ़ी पैदा कर दी।

"अहा, यह आग ख़ूब मिली!" वह बोल उठा—"और फिर इसके चारों ओर ऐसा दिलचस्प जमाव है। मैं तो बिल्कुल ऐंठ गया था; यह नौश का दर्रा तो जैसे किसी विशाल धौंकनी का मुँह है। बार्टलेट से तमाम रास्ते भर इस तूफ़ान के ग़ज़ब-नाक थपेड़े मुँह पर पड़ते रहे हैं।"

नौजवान की पीठ से उसका थैला उतारकर रखने में मदद देते हुए घर के मालिक ने पूछा—"तो आप बारमेण्ट की तरफ़ जा रहे हैं?"

"जी; फिर बर्लिङ्गटन को जाऊँगा बल्कि उससे भी आगे" उसने उत्तर दिया। "मेरा विचार तो था आज रात को एथन क्राफ़ोर्ड पहुँच जाने का; पर पैदल आदमी ऐसे रास्तों पर जैसा यह है, रही जाता है। पर कोई हर्ज नहीं; जब मैंने आप लोगों के प्रसन्न मुख और अँगीठी देखी, मुझे ऐसा लगा, जैसे यह

आपने ही तापने के लिए जला रक्खी हो, और अब मानो मेरी ही की राह देख रहे थे। अस्तु, मैं अब आपके बीच में इत्मीनान से बैठ जाऊँगा।"

इस बेतकल्लुफ़ अजनबी ने अपनी कुर्सी आग के पास तक खिसकाई ही थी, कि बाहर पैरों का एक धमाका सुनाई पड़ा जैसे पहाड़ की ढाल पर से कोई लम्बे तेज क़दम रखता हुआ दौड़ता आया और एक ऐसी छलाँग मकान के बराबर से ली कि सामने की चट्टान से टकरा गया। परिवारवालों की तो साँस रुक-सी गई; वे जानते थे यह आवाज़ क्या है। एक अनजान प्रेरणा से उनका मेहमान भी स्तंभित रह गया।

"इस भय से कि उसे कहीं हम भूल ही न जायँ, पहाड़ बाबा ने यह पत्थर फेंककर हमें चेतावनी दी है" मालिक-मकान ने हवास दुरुस्त होने पर कहा। "कभी-कभी इसका शिखर हिलने लगता है और यह हम पर टूट पड़ने को हो जाता है; लेकिन पड़ोस पुराना है, और आम तौर पर काफ़ी अच्छी तरह निभी चली जाती है। और फिर, अगर सचमुच वह सिर पर आ ही गया, तो हमारे पास नज़दीक ही एक बचने की जगह है।"

अब यह समझ लिया जाय कि उस अजनबी ने अपने गोश्त के भोजन से छुट्टी पा ली, और अपने सहज स्वाभाविक बर्ताव से सारी परिवार की सहानुभूति प्राप्त करके सब के साथ घुल-मिल गया, और इस तरह खुलकर बातें करने लगा मानो उस पर्वतवासी परिवार का ही एक कोई प्राणी हो। वह स्वाभिमानी था, पर प्रकृति से कोमल भी—अमीरों और बड़े लोगों के सामने तो मितभाषी और उद्दंड हो जाता, पर ग़रीब घरों के दरवाज़े पर हमेशा सर झुकाने को तैयार रहता और ग़रीबों की चौपाल में जाकर किसी को बाबा और किसी को भाई

बना लेता। नौश दर्रे के इस परिवार में उसने सहृदयता और भावों की एक सरलता देखी, न्यू इंगलैण्ड जिले की सामान्य बुद्धि और उनके जीवन का काव्योत्कर्ष उस स्थान में देखा, जो कि घर के दरवाजे पर उन्हें उस पहाड़ की ऊँचाइयों और गहराइयों से अनजाने ही प्राप्त हो गया था। वह दूर-दूर तक घूमा था, और अकेले घूमा था; वस्तुतः उसका समस्त जीवन एकाकी पथ के समान था, क्योंकि, अपने कड़े सतर्क स्वभाव के कारण उसने अपने आप को उन लोगों से अलग ही रक्खा था जो विपरीत दशा में उसके हमराही हो भी जाते। इस परिवार में भी—इतनी हमदर्दी और अतिथि-सेवा होते हुए—एक ऐसा ऐक्य-भाव आपस में था, और साथ ही बाहरी दुनिया से एक ऐसा बिलगाव सा, कि अब भी गृहस्थी में इस भावना का स्थान पवित्र नजर आना चाहिए; जहाँ गैर आदमी का दखल नहीं। पर आज की शाम, भावी की प्रेरणा से एक दूसरे के प्रति सहानुभूति ऐसी बढ़ी कि सुसंस्कृत सुशिक्षित युवक अपने मन की सब बातें उनके सामने खोल-खोल कर कहने लगा, और वे भी उसी इत्मीनान और बेतकल्लुफी से उसकी बातों का जवाब देने लगे। और ऐसा ही होना भी था। क्योंकि जहाँ भाग्य का भोग एक समान भोगना बदा होता है, वहाँ आपस-पड़ोस का सम्बन्ध क्या पैदायशी सम्बन्ध से भी गहरा नहीं हो जाता ?

इस नवयुवक के चरित्र में जो छिपा हुआ भेद था वह था परोक्ष में एक महान् आदर्श। ख्याति-रहित जीवन बिता देना उसको सह्य था; पर यह नहीं कि लोग दफ़नाकर उसे भूल जायँ। अस्तु, इस विकल आकांक्षा ने आशा का रूप धारण कर लिया था और दीर्घ समय तक पली रहकर यह आशा एक विश्वास-सा बन गई थी, यद्यपि आज वह गुमनाम सफ़र कर रहा है

पर एक दिन सम्पूर्ण यात्रा-पथ एक विभूति से आलोकित हो उठेगा, चाहे शायद उसके यात्रा-काल में ऐसा न हो सके। पर भविष्य की दृष्टि जब उसके वर्तमान समय के अन्धकार-युग पर पड़ेगी, तब लोग उसके सुदीप्त पद-चिह्नों को पहचानेंगे, जिसकी चमक में साधारणजनों का उत्कर्ष खो जायगा। तब वे स्वीकार करेंगे कि हाँ, कोई प्रतिभावान् व्यक्ति संसार में आया, किन्तु किसी ने उसे पहचाना नहीं।

"अभी तक तो, अभी तक तो" परदेसी ने कहा—उत्साह के आवेश में उसके कपोल गर्म हो गये, आँखें चमक उठीं—"मैंने कुछ नहीं किया है। अगर कल अचानक मैं दुनिया से उठ जाऊँ, तो कोई मेरे बारे में इतना भी न जानेगा जितना आप लोग जानते हैं, कि साको की घाटी से एक गुमनाम नवयुवक रात होते यहाँ आया और शाम को अपने हृदय की कहकर सुबह होते नौश के दर्रे से निकल गया, और फिर बाद को कुछ पता नहीं। कोई इतना भी न पूछेगा, कि वह था कौन? वह यात्री किधर गया? पर जब तक मेरा जीवन-कार्य पूरा नहीं हो जाता, मैं नहीं मर सकता। इसके बाद शौक़ से मौत आये! जब तक अपने जीवन का स्मारक मैं बना चुका हूँगा!"

युवक अपने विचारों में खोया हुआ था। उसके भावों का स्वाभाविक प्रवाह मुक्त रूप से जारी था; इस कारण परिवार के लोग उसके मनोभावों को और भी समझ सके, यद्यपि वे उन्हें विचित्र लगते थे। एकाएक आभास होते ही, कि यह सब बातें कितनी हास्यास्पद हो सकती हैं, वह स्वयं अपने जोश पर, जिसमें वह गया था, लज्जित हो गया।

"आप लोग मुझ पर हँसते होंगे," उसने कहा और सब से बड़ी लड़की का हाथ अपने हाथ में लेकर स्वयं भी हँसने लगा। "आपके विचार में मेरा आदर्श इतना ही निरर्थक है जितना कि

वाशिङ्गटन पहाड़ की चोटी पर सिर्फ इसलिए जाकर अपने आपको गला देना कि जिसमें चारों ओर मैदान से लोग ज़रा मुझे देखें ! और सचमुच किसी मनुष्य की प्रस्तर-मूर्ति के लिए तो वह एक श्रेष्ठ स्थान होगा।"

"यहीं बैठकर आग तापना, सन्तोष और सुख के साथ यहीं रहना, कहीं अच्छा है", लड़की ने शर्माते हुए कहा, "चाहे हमारे बारे में कोई कुछ भी न सोचे।"

"मुझे लगता है"—उसका पिता भावों में तल्लीन रहने के बाद बोला—"कि इस नव-युवक की बातें कुछ-कुछ स्वाभाविक हैं। अगर मेरे भी मन का रुझान ऐसा ही होता तो मैं भी उसी की तरह सोचता। कितना अजीब है यह, बीबी, कि उसकी बातों से मेरा मन ऐसी-ऐसी बातों की ओर चला गया, जो एक तरह से निश्चय है कि कभी पूरी नहीं हो सकतीं।"

"हो भी सकती हैं" इस पर पत्नी ने कहा; "क्यों, यही सोच रहे हो क्या, कि कोई रँडुआ हो जाने पर क्या-क्या करेगा ?"

"नहीं, यह नहीं," स्नेह की प्रताड़ना से इस भाव को दूर करते हुए उसने ज़ोर देकर कहा; "जब मैं तुम्हारी मृत्यु के बारे में सोचता हूँ, एस्थार ! तो मैं अपनी मृत्यु के बारे में भी सोचता हूँ। मैं तो यह अभिलाषा कर रहा था कि हमारे अच्छे से खेत होते, बार्टलेट या बैतलेहेम, या लिटिलटन या किसी और शहर के आस-पास जो इस व्हाइट पर्वत के नीचे बसे हुए हैं, पर जहाँ यह पहाड़ हमारे सिरों पर आकर नहीं टूटता। अपने पड़ोसियों में इज्जत के साथ रहता, 'स्काएर' कहलाता और एक-दो मियाद तक के लिए आम अदालत में भी चुन लिया जाता, क्योंकि एक सीधा-सादा ईमानदार आदमी भी दुनिया की उतनी ही भलाई कर सकता है जितनी कि एक वकील। और फिर जब मैं बिल्कुल बूढ़ा हो जाता और तुम भी बिल्कुल बूढ़ी हो जातीं,

जिसमें हम लोग अधिक समय के लिए न बिछुड़ते, तब मैं तुम लोगों को अपने चारों ओर मातम करते हुए, इत्मीनान के साथ प्राण छोड़ देता। सङ्गमर्मर क्या, एक स्लेट का कुतबा ही मेरे लिए काफी होता, जिस पर सिर्फ मेरा नाम, मेरी आयु, और प्रार्थना का एक पद, और थोड़े से शब्द होते जिनसे लोग जान जाते कि ईमानदारी से जीवन व्यतीत करते हुए एक ईसाई की मौत मैंने पाई।"

"वही न, देखो!" अजनबी ने कहा, "स्वभाव से ही हम किसी न किसी स्मारक की इच्छा करते हैं, चाहे वह सङ्गमर्मर का हो चाहे स्लेट-पत्थर का, सङ्गे-खारा का सतून हो या मनुष्य-मात्र के हृदय में उस बिभूति की एक स्मृति।"

"आज की रात हम लोग बड़ी अजीब-अजीब बातें कर रहे हैं", स्त्री ने जवाब दिया। उसकी आँखों में आँसू थे। "कहा करते हैं कि जब लोग इस तरह की बातें करते हैं, तो यह अपशकुन होता है कि होनेवाला है। बच्चों को भी तो देखो!"

तुरन्त सबने बच्चों की बातचीत पर कान दिया। छोटे बच्चों को दूसरे कमरों में लिटा दिया गया था, लेकिन बीच का दरवाजा खुला था, और तन्मय होकर वे जो बातें कर रहे थे, उसे सुना जा सकता था। अँगीठी के आगे बैठे हुए सज्जनों का मनोभाव सबों के हृदय पर छा गया था। और वे सबके सब एक-दूसरे से बढ़-बढ़कर अपनी-अपनी इच्छाएँ और बालोचित योजनाएँ प्रकट कर रहे थे, जिन्हे स्त्री-पुरुष होकर बड़े होने पर वे पूरा करेंगे। अन्त में एक छोटा लड़का, अपने भाई-बहनों से न कहकर, अपनी मा से बोल उठा :—

"मैं बताऊँ, क्या चाहता हूँ, मा?" उसने जोर से कहा, "मैं चाहता हूँ कि आप और पिताजी और दादीजी और हम

सब और यह, यह परदेसी भी इसी दम उठ खड़े हों और जायँ ल्फ़ूम नदी की घाटी में पानी पीकर आयें !"

इस प्रकार अपना गर्म-गर्म बिस्तर छोड़कर, तथा सबों को सुखद अँगीठी की आँच के सामने से खींचकर ल्फ़ूम की घाटी में—ल्फ़ूम निर्झर जो एक सीधी चट्टान से नौश-दर्रे के एक गहरे खड्ड में गिरता है, वहाँ—ले चलने के इस बच्चे के विचार पर किसी की हँसी न रुक सकी। लड़के की बात अभी समाप्त ही हुई थी, कि एक ठेला-गाड़ी सड़क पर से गुजरी और क्षण भर के लिए दरवाजे पर ठहर गई। उसमें दो या तीन आदमी मालूम होते थे जो, अपने आपको मगन रखने के लिए, किसी गीत की बेतुकी टीप उड़ा रहे थे। गीत की बिखरी हुई तानें पहाड़ की ऊँची ढालों में फैलकर प्रतिध्वनित हो रही थीं। उस समय ये गानेवाले इस दुबिधा में पड़े हुए थे कि यात्रा जारी रक्खी जाय या रात को यहीं विश्राम कर लिया जाय।

"पिताजी !" लड़की ने कहा—"वे आपका नाम लेकर पुकार रहे हैं।"

पर उस नेक आदमी को इसमें शक था कि उन्होंने सचमुच उसे पुकारा होगा; और फिर यात्रियों को अपने घर दावत देकर वह यह नहीं दिखाना चाहता था कि आमदनी उसे बहुत प्यारी है। अस्तु, द्वार तक जाने की उसने कोई जल्दी नहीं की। उधर यात्रियों ने साँटा मारा और नौश-दर्रे में पहले की तरह हँसते-गाते हुए आगे बढ़ गये, यद्यपि उनकी हँसी और उनका सङ्गीत पहाड़ के अन्तर से क्षीण रूखे स्वर में यहाँ तक आ रहा था।

"देखो, मा !" छोटा लड़का फिर बोल उठा, "वे लोग ल्फ़ूम तक बिठाकर हमें ले चलते !"

रात में घूमने के लिए जाने को बच्चे की उत्कट इच्छा पर सबों को फिर हँसी आ गई। पर उधर लड़की के मन पर एक हलकी बदली-सी छा गई; गम्भीर होकर वह आग की तरफ़ देखने लगी, और एक साँस ली, जो लगभग उच्छ्वास ही थी। उसको दबा रखने की उसने कुछ कोशिश भी की, पर वह निकल ही गई। तब चौंककर और लजाते हुए उसने जल्दी से अपने चारों ओर देखा कि कहीं सबको उसके मन की बात का आभास तो नहीं मिल गया। परदेसी ने पूछा—"क्या सोच रही थीं ?"

"कुछ नहीं", गरदन झुकाये हुए, मुस्कराकर उसने कहा, "मैं ठीक उस समय केवल अकेला अनुभव कर रही थी।"

"ओह, दूसरों के मन की बात जान लेने की सिफ़त मुझमें हमेशा से रही है" उसने ज़रा गम्भीर बनकर कहा। "कहो, तुम्हारे मन का भेद बता दूँ ? क्योंकि मैं जानता हूँ कि जब गर्म-गर्म अँगीठी तापते समय एक जवान लड़की का कम्पन हो उठता है, और अपनी मा के पास बैठी हुई भी वह अकेलेपन की शिकायत करती है तब उसके बारे में क्या सोचना चाहिए। इन भावों को शब्दों में व्यक्त कर दूँ ?"

"अगर उन्हें शब्दों में रक्खा जा सकता है, तो फिर तो वे बिल्कुल एक लड़की के भाव न रह जायँगे,"—हँसते हुए, पर आँखें मिलाने में झेंपते हुए पर्वतीय बाला ने उत्तर दिया।

यह पूरी बातचीत अलग हुई थी। सम्भवतः उनके हृदयों में प्रेम का अङ्कुर फूट रहा था, इतना स्वच्छ, कि वास्तव में वह स्वर्ग के ही योग्य था। पृथ्वी पर तो वह पनप नहीं सकता; कारण कि स्त्रियाँ ऐसे ही विनम्र स्वाभिमान की आराधना करती हैं जैसा कि उस युवक का था। और स्वाभिमानी विचारशील किन्तु सहृदय पुरुष भी बहुधा ऐसी ही सरलता द्वारा

बन्दी हो जाते हैं जैसी कि इस युवती के स्वभाव में थी। पर जब कि वे दोनों धीमे-धीमे बात कर रहे थे और युवक उस बाला के मन की हलकी बदलियों, उसके सुखद विषाद, उस कन्या की स्वाभाविक लजीली इच्छाओं को आँक रहा था, नौश-दर्रे की आँधी-सी साँय-साँय अधिक विषम और गहन हो गई। जैसा कि भावुक परदेसी ने कहा, जान पड़ता था कि तूफानी रूहें जो पहले कभी रेड इण्डियनों के युग में इन पहाड़ों पर वास करती थीं और जिनसे पहाड़ की ये चोटियाँ और गुफाएँ पवित्र मानी जाती थीं, वे अब मिलकर एक स्वर से नाद कर रही हैं। सड़क पर एक मातम पीटने की-सी आवाज थी, जैसे कोइ मुर्दा जा रहा हो। इसकी उदासी को दूर करने के लिए पति-पत्नी ने आँच में पाइन वृक्ष की टहनियाँ डालीं। उनकी सूखी पत्तियाँ कुड़कुड़ाईं, आग सुलग उठी, और फिर वही एक ग़रीब घर का सुख और शान्ति का वातावरण उत्पन्न हो गया। आग का प्रकाश उनके सब ओर हिल रहा था, और एक आत्मीयता के साथ उन्हें स्पर्श-सुख दे रहा था। उधर अलग अपने बिस्तरों से झाँकते हुए बच्चों के छोटे-छोटे चेहरे; इधर पिता का दृढ़ शरीर, माता का सावधान और विनम्र भाव, उन्नत-मस्तक नव-युवक, उभार में आती हुई नव-बाला, और बूढ़ी अच्छी दादी-मा, जो सब से गर्म स्थान में बैठी अब भी बुन रही थीं। बूढ़ी मा ने काम से अपना सिर उठाकर देखा, यद्यपि उँगलियाँ उसी तरह चलती रहीं। अब की ये बोलने को थीं।

"बच्चों की ही तरह"—वह बोली—"बूढ़ों के मन में भी अपनी भावनाएँ होती हैं।"

"तुम लोग अपने-अपने मंसूबे बाँध रहे हो। कभी इस बात को सोचते हो, कभी उस बात को। अन्त में तुम लोगों

ने मेरा भी मन भरम में डाल दिया। भला, अच्छा, एक बुढ़िया को अब किस बात की चाहना होगी, जिसके दोनों पैर क़ब्र में लटके हुए हैं। बच्चो, मैं जब तक तुम्हें बता न दूँगी वह बात दिन-रात मेरे पेट में घूमती रहेगी !"

"क्या है वह बात, मा ?" पति-पत्नी दोनों एक साथ पूछ उठे।

बुढ़िया ने तब बड़े रहस्य के साथ, जिससे सब कोई अँगीठी के और भी निकट खिसक आये, उन्हें बताया कि कुछ वर्ष हुए उन्होंने अपनी क़ब्र के वस्त्रों का इन्तज़ाम कर लिया है—एक गजी का उम्दा कफ़न, मलमल की झालरोंवाला टोपा, और अन्य वस्त्र, शादी के बाद जो उसने पहने थे, उनसे कहीं बढ़िया। आज लेकिन एक पुराने शकुन का विचार उसके मन में अजीब तरह से उठने लगा था। जब वह छोटी थी तो लोग कहा करते थे कि मुर्दे के साथ अगर कोई बात ठीक न हुई, यहाँ तक कि अगर टोपे का झालर भी एकसार बराबर न हुआ, या टोपा ठीक से न बैठा, तो ताबूत में मिट्टी के नीचे मुर्दा अपने ठण्डे हाथों से उसे ठीक करने का प्रयत्न करता है। इस विचार मात्र से वह घबराती थी।

"ऐसी बात न करो, दादी-मा !" लड़की ने काँप कर कहा।

"अच्छा तो," बूढ़ी-मा एक विचित्र गंभीर भाव से, पर साथ ही अपनी मूर्खता पर अजीब तरह से मुस्कराते हुए, कहती गई, "मेरे बच्चो, मैं चाहती हूँ कि तुममें से एक—जब कफ़नाकर तुम्हारी मा को ताबूत में रख दे—तो, मैं चाहती हूँ कि तुममें से कोई एक मेरे सामने लेकर आइना कर दे। कौन जाने, मैं एक झलक देख ही लूँ कि हाँ, सब ठीक है या नहीं !"

"क्या बूढ़ा और क्या बच्चा," परदेसी युवक ने धीरे से आप ही आप कहा—"हम सब क़ब्रों और स्मारकों का स्वप्न देखते हैं। मैं सोचकर हैरान होता हूँ कि जहाज़ जब डूबने

रिप वान विंकिल

जिसने भी हडसन नदी की यात्रा दूर तक की है उसे काट-स्किल पर्वतों की याद अवश्य होगी। ये पर्वत विशाल अपालेशियन की ही एक शाखा हैं, जो नदी के पश्चिम ओर चले गये हैं और खासी ऊँचाई तक उठकर आस-पास के प्रान्त का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। ऋतुओं का परिवर्तन, आब-हवा की हरेक तब्दीली, बल्कि घण्टे-घण्टे का फ़र्क़ इन पहाड़ों के रूप-रङ्ग में अन्तर ले आता है। दूर और नजदीक की सभी भली घर-गृहस्थीवाली स्त्रियाँ इन्हें एक अच्छा खासा मौसमी यन्त्र समझती हैं। खुले हुए साफ़ मौसम में तो वे नीला और बैंगनी आवरण धारण कर लेते हैं; पर कभी-कभी जब और कहीं भी बादल नहीं होते तब इनकी चोटियों पर भूरे बादलों की एक पगड़ी-सी लिपट जाती है, और वह डूबते हुए सूर्य की अन्तिम किरणों में वैभव के ताज की तरह झिलमिला उठती है।

इन विचित्र पहाड़ों के नीचे बसे हुए एक गाँव से यात्रियों ने हलका-हलका धुँआ उठता देखा होगा। ठीक जहाँ पर कि पहाड़ों का नीलापन पास की ताज़ा हरियाली में खो जाता है, घरों की एक-एक छत पेड़ों के बीच से झलकती है। बड़ा पुराना है यह छोटा-सा गाँव। इस प्रान्त के आरम्भिक काल में, जब भले स्टायवेसाएट के (ईश्वर उसको शान्ति दे!) शासन का आरम्भ ही हुआ था, तब कुछ डच प्रवासियों ने इसको बसाया था; और अभी कुछ साल पहले तक प्रथम निवासियों के थोड़े से घर यहाँ खड़े थे, जिन्हें कि हॉलैण्ड से लाई गई छोटी-छोटी पीली ईंटों से बनाया गया था, जिनमें परदेदार

खिड़कियाँ और सामने की ओर निकले हुए छज्जे थे और जिनके ऊपर हवा का रुख बतानेवाली खिड़कियाँ लगी हुई थीं।

इसी गाँव में, इन्हीं में से एक घर में (जिसे बिल्कुल सच पूछो तो समय ने बर्बाद और मौसमों की मार ने हिला दिया था) बहुत बरस हुए—जब कि यह प्रान्त ग्रेट ब्रिटेन का ही एक सूबा था—एक सीधा-सादा भलामानुस रहता था, जिसका नाम था रिप वान विंकिल। वह वान विंकिलों के खान्दान से था जिनका पीटर स्टायवेसाएट के युग में वहादुरी के लिए नाम आता है, और जो क़िला-क्रिस्टीना के घेरे में भी उसके साथ गये थे। पुरखों का वीरत्व तो, खैर, उसमें क्या था। मैंने कहा न, वह एक सीधा-सादा भोला-भाला आदमी था, और साथ ही एक नेकदिल पड़ोसी और अपनी बीबी का फ़रमाबरदार खाविन्द। हाँ, इस अन्तिम गुण ने ही शायद उसके स्वभाव में वह नम्रता भर दी थी जिससे वह इतना सर्व-प्रिय हो गया था। क्योंकि अधिकतर वे ही लोग बाहर सब के आज्ञाकारी, सब से जी-हाँ जी-हाँ करनेवाले, हो सकते हैं जो घर में लड़ाका स्त्री के नियन्त्रण में रहते हैं। घरेलू जङ्ग और मुसीबत की आग में तप कर, निःसन्देह उनके स्वभाव में एक मुलायमियत और नर्मी आ जाती है; और धैर्य तथा दीर्घ कष्ट-साधन के सद्गुणों की शिक्षा देने के लिए तो एक लेक्चर दुनिया भर के नीत्युपदेश के बराबर है। अतः एक लड़ाका बीबी कुछ अंशों में ईश्वर की एक सम्मान्य और शुभ देन समझी जा सकती है; और अगर ऐसा है, तो रिप वान विंकिल तिगुने पुण्य का भागी था।

निश्चय ही गाँव भर की स्त्रियाँ उस पर स्नेह-भाव रखती थीं; और जैसा कि उनकी सरस-हृदय जाति में स्वभावतः होता है, वे घरेलू झगड़ों में उसी का पक्ष लेती थीं और जब कभी

शाम की बैठकों में इन मामलों पर बातचीत चलती, तो वे सारा दोष बीबी वान विंकिल के मत्थे डाल देती थीं। गाँव के लड़के-बाले भी उसके आते ही खुशी के मारे शोर मचाने लगते। वह उनके खेलों में शामिल हो जाता, उन्हें खेल-खिलौने बना देता, उन्हें पतङ्ग उड़ाना और पत्थर का निशाना लगाना सिखाता, और भूत-परेत, जादू-मन्तर और जङ्गली रेड-इण्डियन जातियों के बारे में लम्बी-लम्बी कहानियाँ सुनाया करता।

जब कभी वह गाँव में घूमता हुआ निकलता, उनकी एक भीड़ उसके साथ लगी रहती। वे उसकी पीठ पर चढ़ते जाते, और बिना किसी भय-सङ्कोच के सौ तरह से उसका तमाशा-सा बनाये रखते। गाँव भर में एक कुत्ता भी उसकी ओर नहीं भौंक सकता था।

एक बड़ी कमी जो रिप के स्वभाव में थीं, वह थी सब प्रकार के लाभदायक कामों से घोर अरुचि। उससे जमकर, लगकर काम न हो सकता हो, सो बात नहीं। क्योंकि वह मछली के शिकार के लिए तातारी बल्लम से भी भारी बंसी थामे हुए किसी गीली चटान पर सारे-सारे दिन बैठा रहता, चाहे उसका दिल बढ़ाने के लिए एक बुल-बुला भी न उठे। वह चन्द गिलहरियों या जङ्गली कबूतरों के पीछे, घण्टों कन्धे पर बन्दूक रक्खे, कभी झाड़ियों और दलदलों में, कभी पहाड़ी ढालों पर, कभी नीचे घाटियों में मारा-मारा फिरता रहता। मामूली से मामूली मेहनत में भी वह पड़ोसियों की मदद करने से इन्कार न करता; मकई की भूसी निकलवाने के उत्सव में, या पत्थरों की बाड़ बाँधने में, वह सबों से आगे रहता। गाँव की स्त्रियाँ भी अपने संवाद-सन्देश और सौदे-सुलुफ़ के लिए उसे भेजती रहतीं; और ऐसे छोटे-मोटे कामों पर भी, कि जिन्हें खुद उनके कम मेहरबान खाविन्द उनके लिए न करते। सारांश यह कि अपने

काम को छोड़कर और किसी के भी काम में जुट जाने को रिप तैयार था; पर घर-गृहस्थी की फ़र्ज़-अदायगी और अपने खेत की दुरुस्ती और देख-भाल यह उसके लिए असम्भव था।

और वास्तव में उसने साफ़ कह भी दिया कि उस खेत में मेहनत करना फ़जूल है; क्योंकि सारे इलाक़े में वह सब से सड़ा हुआ ज़मीन का टुकड़ा था; उसमें सब बिगड़ता ही रहता था, उसके बावजूद बिगड़ता रहता था। उसकी बाड़ें बराबर गिरती और कमज़ोर ही होती रहती थीं; उसकी गाय या तो कहीं भटक जाती या गोभियों के खेतों में निकल जाती; घास-कबाड़ उसके खेतों में दुनिया भर से पहले खड़ा हो जाता था; बारिश-बरखा भी ठीक उसी समय आती जब उसे कोई बाहर का काम करना होता था; इस तरह यद्यपि उसके पुरखों की जमींदारी उसकी निगरानी में ही बीघा-बीघा करके नष्ट हो चुकी थी, यहाँ तक कि सिवा मकई के एक टुकड़े के और आलुओं के खेत के बराय नाम ही कुछ रह गया था, पर इनकी हालत भी आस-पास के खेतों में सब से खराब थी।

उसके बच्चे भी ऐसे फटे-हाल, भूतों की तरह, रहते थे मानों वे किसी के हैं ही नहीं। उसके लौंडे रिप में अपने बाप की ही शकल-सूरत और उसी के-से लक्षण थे, और दिखाई देता था कि बड़ा होकर बाप के ही उतरे कपड़े पहनेगा। जैसे कि आँधी के समय विशेष महिलाएँ अपने नीचे लम्बे दामन उठा लेती हैं वैसे ही अपने अब्बा की पुरानी बिरजिस को, जिसे वह पहने रहता, ज्यों-त्यों किसी तरह हाथ से ऊपर थामे हुए, वह बहुधा अपनी मा के पीछे-पीछे एक बछड़े की तरह जाता हुआ दिखाई दिया करता।

पर रिप वान विंकिल तो उन मौजी प्राणियों में से था, बौड़म और चिकना घड़ा, जो दुनिया में बेफ़िक्र रहते, और रूखी या

तर जो भी कम से कम बौद्धिक या शारीरिक श्रम से मिल जाता, खा रहते, और जिन्हें एक पैसे में आधे पेट रह लेना मञ्जूर लेकिन एक रुपये के लिए मेहनत करना गवारा नहीं। अगर उसे अपने ऊपर छोड़ दिया जाता तो वह बड़े इत्मीनान के साथ अपना जीवन चैन की बंसी बजाकर बिता देता; लेकिन उसकी स्त्री जो उसके कानों में लगातार भौंकती रहती थी कि वह अहदी है, निखट्टू है, और सारी गिरिस्ती को मिट्टी में मिलाये दे रहा है।

क्या सुबह, क्या दोपहर, क्या रात, उसकी ज़बान दिन-रात चलती ही रहती थी, और उसकी हरएक बात और हर एक काम पर जो वह करता, घरेलू वाक्-पटुता प्रवाहित हो उठती। इन सब व्याख्यानों का जवाब देने को रिप के पास बस एक ही उपाय था। वह अपने कन्धों को हरकत देकर, सिर हिलाता, और एक नजर ऊपर देखकर चुप रह जाता। पर इससे सदैव ही उसकी पत्नी का आवेग और बढ़ जाता, और ताजा बौछार शुरू हो जाती। अतः वह हारकर, अपनी सारी शक्ति सञ्चित कर, घर के बाहर आ बैठता—वास्तव में घर का यही भाग जोरू के ग़ुलाम का हुआ करता है।

घर में उसका एक मात्र साथी उसका कुत्ता भोटू था। अपने मालिक की तरह वह भी बीबी का भाड़ू था; कारण, बीबी वान विंकिल इन दोनों को काहिली में एक समझती थी, बल्कि भोटू तो उसको एक आँख भी नहीं सुहाता था, इसलिए कि उसी ने अपने मालिक को इतना अधिक आवारा कर दिया था। यह सही है कि एक शरीफ कुत्ते में जितनी बातें होनी चाहिएँ, उसके हिसाब से वह इतना ही बहादुर था जितना कोई शिकारी जानवर हो सकता है; पर एक स्त्री के जबान की हर वक्त की, बे-तरह की, मार के आगे किसकी बहादुरी ठहर सकती है?

घर में घुसते ही भोटू की छाती नीची हो जाती, दुम जमीन से लग जाती, और बार-बार दबी आँखों के किनारों से बीबी वान विङ्किल को देखता हुआ, हत्यारे क़ैदी की तरह छिपता-सा फिरता, और जरा कहीं झाड़ू या करछी उठ जाती तो वह कूकता हुआ बेतहाशा दरवाज़े की तरफ़ भागता।

विवाहित जीवन के वर्ष ज्यों-ज्यों बीतने लगे, रिप वान विंकिल का समय ख़राब ही आता गया। उम्र के साथ स्वभाव की कठोरता में नर्मी नहीं आती, और तेज़ ज़बान ही एक ऐसा औज़ार है जो बराबर इस्तेमाल से और पैनी हो जाती है। बहुत अर्से तक तो, घर से निकाले जाने पर, वह पहुँचे हुए बुज़ुर्गों, फ़िलासफ़रों, और गाँव के अन्य बैठे-ठाले व्यक्तियों के एक अठपहरे क्लब में जाकर सन्तोष कर लेता था। एक छोटी-सी सराय के आगे, जिसका कि नाम-निशान हुज़ूर शाहंशाह जार्ज तृतीय की एक लाल सी तस्वीर द्वारा प्रकट होता था, पड़ी हुई एक बेंच पर इस इजलास की बैठक लगती। यहाँ गर्मियों के आलस्यपूर्ण लम्बे दिवसों में वे छाँह में बैठकर विरक्त-भाव से अपनी गाँव-चर्चा की बातें करते रहते या व्यर्थ की औंघाने-वाली लम्बी दास्तानें सुनाते। पर कहीं यदि उस ओर से गुज़रते हुए किसी यात्री से उन्हें कोई पुराना अख़बार मिल जाता, तब उस पर जो गहरी बहस छिड़ती वह किसी भी राज-नीतिज्ञ के देखने की चीज थी। उसकी ख़बरों को, जिसे कि वह सफ़ेद-पोश ठिंगना-सा पण्डित यानी स्कूल मास्टर डेरिक वान बमल धीरे-धीरे पढ़कर सुनाता था, वे लोग कितनी गम्भीरता से सुनते! और फिर कितनी दूरदर्शिता और बुज़ुर्गी के साथ सार्वजनिक घटनाओं पर वे लोग विचार करते!

इस जमात पर सर्वथा निकलस वेडर का प्रभाव रहता था, जो उस गाँव का सरपञ्च और सराय का मालिक था। सुबह

से रात होने तक वह अपने दरवाजे पर ही बैठा रहता, बस जरा धूप से बचने भर को बड़े पेड़ की छाँह में थोड़ा खिसक लेता; पड़ोसी लोग इसी से घण्टे-घण्टे का ठीक समय उसी प्रकार बता देते थे जैसे धूप-घड़ी से। यह सच है कि मुश्किल से उसे कभी किसी ने बोलते सुना था, पर हर समय पाइप उसके मुँह में रहता था। फिर भी इसके अनुयायी (क्योंकि अनुयायी तो प्रत्येक महान् व्यक्ति के होते हैं) पूर्णतः उसके भाव को समझ लेते थे। वे जानते थे कि उसकी राय किस तरह मालूम करनी चाहिए। जब किसी पढ़ी गई बात या वर्णन से वह अप्रसन्न हो जाता, तो वह जोर-जोर से पाइप के दम लगाता, और गुस्से का कम-कम धुँआ जल्दी-जल्दी निकालता नजर आता; पर जब प्रसन्न होता तो वह धीरे-धीरे इत्मीनान के साथ कश खींचता और धुँए के हलके, शान्त बादल छोड़ता; कभी-कभी तो पाइप मुँह से हटा लेता, तरल सुगन्धित वाष्प को नाक के आस-पास मण्डलाकार उड़ने देता, और अपना पूर्ण अनुमोदन प्रकट करते हुए बड़ी गम्भीरता से अपना सिर हिलाता।

बेचारे रिप को इस आश्रय से भी आखिरकार उसकी लड़ाका बीबी ने भगा दिया। वह यकायक इस बैठक की शान्ति भङ्ग करने को फट पड़ती और कहती कि तुम सब नाकारे हो; स्वयं निकलस वेड्डर की बुजुर्ग हस्ती तक को उस काली माई की तर्रार जबान से अमान न मिलता। वह सरासर उस पर यह इलजाम लगाती कि वही उसके मरदुवे में और-और सुस्ती की आदत डलवा रहा है।

अन्त में बेचारा रिप एक तरह से निराश-सा हो गया। खेती की मेहनत और घर की काँय-काँय से बचने का यही रास्ता उसके लिए रह गया था कि बन्दूक उठावे और जङ्गलों में निकल जाय। वहाँ कभी कहीं एक पेड़ के नीचे बैठ जाता

और थैले में जो कुछ होता उसको वह और भोट्ट बाँटकर खा लेते। अत्याचार में सह-भोगी की तरह भोट्ट के साथ उसकी सहानुभूति थी। "गरीब भोट्ट।" वह कहता, "तेरी मालकिन ने तेरी जिन्दगी कुत्ते की जिन्दगी कर रक्खी है; पर, कोई बात नहीं, बेटा, जब तक मैं जिन्दा हूँ, पास खड़ा होने के लिए तुझे किसी दोस्त-साथी की जरूरत नहीं।" भोट्ट अपनी दुम हिला देता, और अगर कुत्ते समवेदनाशील होते हैं, तो सचमुच मुझे विश्वास है, वह उसके भावों को सम्पूर्ण हृदय से दुहराता।

पतझड़ के मौसम में एक दिन इसी तरह एक लम्बी गश्त में रिप काटस्किल पर्वतों के सब से ऊँचे भागों में से एक स्थान में पहुँच गया। वह अपनी रुचि के, गिलहरी के शिकार के पीछे था, नीरव एकान्त वन उसकी बन्दूक की आवाज से बार-बार गूँज उठता था। खूब दिन ढलने पर, थक कर हाँफता हुआ सा वह एक हरे-भरे टीले पर जाकर बैठ गया, जिस पर जङ्गली घास-पात उगा हुआ था। यह एक सीधी ऊँची चट्टान का निकला हुआ ऊपरी भाग था। पेड़ों के बीच में एक खुले हुए भाग से वह मीलों तक नीचे भरे-पूरे जङ्गली प्रान्त को देख सकता था। दूर पर, बहुत दूर, उसने प्रभुता-पूर्ण हडसन नदी को देखा जो मौन, किन्तु शान के साथ, अपने पथ पर बहती चली जा रही थी। कोई बैंगनी बादल छाया या पीछे रह गई किसी किश्ती के पाल का प्रतिबिम्ब इधर-उधर उसके हृदय-दर्पण पर सोता हुआ जान पड़ता था, और अन्ततः नीले पहाड़ों में विलीन हो जाता था।

दूसरी ओर उसने एक सुनसान गहरे टेढ़े-मेढ़े भयानक खण्ड की तरफ झाँका जिसका तल बराबर में खड़ी ऊँची चट्टानों के टूटे भागों से भरा हुआ था। डूबती हुई सूर्य-रश्मियों का

प्रकाश उसमें मुश्किल से पहुँचता था। कुछ देर तक रिप इसी दृश्य पर मनन करता हुआ पड़ा रहा। शाम धीरे-धीरे बढ़ती जा रही थी; घाटियों में पहाड़ों का लम्बा नीला साया फैलने लगा; उसने देखा कि गाँव में उसके पहुँचने से बहुत पहले अँधेरा हो जायगा; और जब उसे बीबी वान विङ्किल के आतङ्क का सामना करने का ध्यान आया तो उसने एक गहरी आह भरी।

वह वहाँ से उतरने ही वाला था, कि उसने कुछ फ़ासले से किसी के पुकारने की आवाज सुनी, "रिप वान विङ्किल! रिप वान विङ्किल!" उसने चारों ओर देखा, पर कोई नजर न आया, केवल एक कौआ अकेला पहाड़ के ऊपर से उड़ा चला जा रहा था। उसने सोचा, जरूर भ्रम रहा होगा और फिर नीचे उतरने के लिए मुड़ा,—कि उसी समय वही आवाज सन्ध्या की शान्त वायु में ऊँची होकर आई, "रिप वान विङ्किल! रिप वान विङ्किल!"—साथ ही मोटू ने अपनी पीठ सुरसुराकर ऊँची की, और एक बार धीमे से ग़ुर्राया और अपने स्वामी के बराबर में होकर खड्ड में भय से देखने लगा। रिप के मन में एक अज्ञात-सी आशङ्का उठने लगी। उसने उसी ओर उद्विग्न होकर देखा और एक अजीब-सी मूर्ति उसे चट्टान पर धीरे-धीरे कठिनाई से ऊपर चढ़ती हुई नजर आई, जो किसी वस्तु के भार से, जिसे वह अपनी पीठ पर लिये हुए थी, दबी जा रही थी। इस एकान्त और निर्जन स्थान में कोई मनुष्य भी होगा यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ। पर यह सोचकर कि अड़ोस-पड़ोस के आदमी को उसकी सहायता की जरूरत होगी, वह शीघ्रता से उसकी मदद को नीचे पहुँचा।

निकट पहुँचकर उसे अजनबी के विचित्र वेश पर और भी ताअज्जुब हुआ। वह चौड़े बदन का ठिगना-सा बुड्ढा था; घने उलझे हुए बाल थे, और खिचड़ी दाढ़ी। उसकी पोशाक बहुत

ही पुराने डच फैशन की थी—कमर पर पेटीदार सूती मिर्जई; और टाँगों पर कई-कई बिरजिसों के जोड़े, जिनमें ऊपरवाली ख़ूब ढीली-ढाली-सी बिरजिस में बराबर से दोहरे बटन लगे चले गये थे और घुटनों पर झालरों के गुच्छे लटकते थे। कन्धे पर वह एक मजबूत सा ऊँचा झज्झर लिये था। उसने सङ्केत-द्वारा रिप को बोझे में मदद देने के लिए कहा। नवागन्तुक के प्रति रिप के मन में यद्यपि कुछ झिझक और अविश्वास था, तथापि अपनी स्वाभाविक तत्परता से उसने हाथ बटाया। एक-दूसरे का भार आधा करते हुए वे दोनों उस तङ्ग-सी गली से होकर ऊपर चढ़ने लगे जो किसी पहाड़ी झरने का सूखा हुआ पथ रहा होगा। ज्यों-ज्यों वे चढ़ते जाते थे, रिप को एक दूर स्थित बादलों की दीर्घ गहन गरज की-सी आवाज रह-रहकर सुनाई देती थी, जो किसी गहरी तङ्ग घाटी या ऊँची चोटियों के दरारों में से (जिस ओर कि उनका ऊबड़-खाबड़ पथ उन्हें ले जा रहा था) उठती हुई जान पड़ती थी। वह एक क्षण के लिए ठहर गया, पर यह अनुमान करके कि यह पहाड़ी चोटियों पर अक्सर होनेवाली मामूली बारिश के बादलों की थोड़ी देर की गरज है, वह आगे बढ़ा। घाटी से गुजर कर वे लोग एक घिरे हुए छोटे से अखाड़े जैसी कुलिया में पहुँचे, जो सीधी चट्टानों द्वारा चारों ओर से घिरा था, जिनके सिरों पर झुके हुए पेड़ों की शाखाएँ फैल गई थीं, कि उनके बीच में से आप केवल गहरे नीले आसमान और शाम के रँगे हुए एक बादल को ही देख सकते थे। सारे समय भर, रिप और उसका साथी केवल मौन रहकर परिश्रम करते चले आये थे; कारण कि, रिप को यद्यपि इस बात का बहुत बिस्मय था कि इस निर्जन पहाड़ की ऊँचाई पर शराब का झज्झर ले जाने का आखिर क्या मत-लब था, पर उस अपरिचित के चारों ओर एक ऐसा कुछ अभेद्य

वैचित्र्य का भाव था जो घनिष्ठता के पैदा होने में रुकावट डालता और मन में आतङ्क पैदा करता था।

इस घिरी हुई जगह में पहुँचते ही आश्चर्य की नई वस्तुएँ सामने आईं। बीच के समथल स्थान में अजीब-अजीब शक्लों के व्यक्ति 'नाइन-पिन' का खेल खेल रहे थे। अद्भुत, विदेशी चलन के, उनके वस्त्र थे। कुछ तो छोटे बंडी की तरह के कोट पहने थे, और कुछ मिर्जइयाँ और पेटियों में लम्बे-लम्बे छुरे; कइयों की बिरजिसें बड़ी भारी और ढीली-ढाली-सी थीं, जैसी की पथ-प्रदर्शक की। उनके चेहरे भी अजीब ही थे; एक का सिर बड़ा सा, मुँह चौड़ा, और आँखें छोटी-छोटी सुए की सी थीं; दूसरे के मुँह पर तो बस नाक ही नाक थी, और उसके ऊपर था एक नानवाईवाला हैट, जिसमें एक लाल मुर्गे की दुम का पर लगा हुआ था। दाढ़ियाँ सबों की थीं, और विभिन्न रङ्ग और प्रकार की। उनमें एक था जो दल का सरदार मालूम होता था। शरीर से हृष्ट-पुष्ट इस बूढ़े के चेहरे से प्रकट होता था कि उसने बहुत मौसमों के थपेड़े खाये हैं। उसका पहनावा था गोटेदार कोट, एक चौड़ी पेटी, जिसमें लटकती हुई एक तलवार, एक ऊँचा सा टोप, जिसमें पर लगा हुआ, लाल मोजे, ऊँची-ऊँची एड़ियों के जूते, जिनमें गुलाब के फूल लगे हुए थे। इस सारे गुट्ट ने रिप को उस प्राचीन फ्लेमिश चित्र में अङ्कित मूर्तियों की याद दिला दी, जो गाँव के पादरी डोमिन वान शाइक की बैठक में लगा हुआ था और जो गाँव बसने के समय हॉलैण्ड से लाया गया था।

विशेष तौर से जो बात रिप को अजीब लगी वह यह थी कि (जैसा कि प्रकट होता था) वे लोग यद्यपि अपना मन-बहलाव ही कर रहे थे, पर उनकी मुद्राएँ अत्यन्त गम्भीर थीं और उनका मौन अत्यन्त रहस्यमय था। अपना मनोरञ्जन

करती हुई ऐसी मलिन-मुख पार्टी तो उसने शायद ही कभी देखी हो। उन गोलों के अतिरिक्त, जिनके लुढ़काये जाने से पर्वतों में बादल की-सी गरज और गड़गड़ाहट प्रतिध्वनित हो उठती थी, वहाँ उस दृश्य की नीरवता भङ्ग करनेवाला और कोई नहीं था। उसके साथवाले व्यक्ति ने अब बर्तन का पदार्थ बड़े-बड़े गिलासों में खाली कर दिया और सङ्केत में रिप से कहा कि उपस्थित जनों की सेवा में ठहर जाय। उसने भय से काँपते हुए आज्ञा का पालन किया; गम्भीर मौन धारण किये हुए उन सबों ने शराब पी और फिर अपने खेल में जुट गये।

धीरे-धीरे रिप का आतङ्क और भय कम हो गया। बल्कि जब किसी की दृष्टि उस पर जमी हुई नहीं थी, तब उसने थोड़ी सी शराब चख लेने का भी साहस किया। उसमें उसे बहुत कुछ बढ़िया हालैण्ड की शराब का मजा आया। वह तृष्णापूर्ण स्वभाव से ही था। थोड़ी देर के बाद ही उसने एक घूँट फिर पी। एक घूँट के बाद दूसरी के लिए लालसा बढ़ी, और वह बड़े गिलास तक इतनी बार पहुँचा कि आखिरकार उसकी चेतन-शक्ति लुप्त हो गई, आँखें सिर की ओर चढ़ गईं, सिर धीरे-धीरे लुढ़कने लगा, और वह एक गहरी निद्रा में गिर पड़ा।

जगने पर उसने अपने आपको उसी हरियाली चोटी पर पाया जहाँ से उसने खडवाले बूढ़े आदमी को पहले देखा था। उसने आँखें मलकर देखा, सुबह की चमकती हुई धूप निकल आई थी। झाड़ियों में चिड़ियाँ चहक-फुदक रही थीं। एक बाज प्रातःकाल की स्वच्छ वायु में उन्मुक्त ऊपर मँडला रहा था। "सचमुच" रिप ने सोचा "मैं सारी रात तो यहाँ नहीं सोता रह गया।" सोने से पूर्व की घटनाओं को उसने याद किया। शराब का झज्झर लिये हुए वह विचित्र मनुष्य—चट्टानों के मध्य में वह निर्जन एकान्त—'नाइन-पिन' के खेल में जुटे हुए करुण

दल के वे सदस्य। "ओह, वह शैतानी गिलास!" रिप ने अपने दिल में कहा—"मैं बीबी वान विङ्किल के आगे क्या बहाना बनाऊँगा!"

अपनी बन्दूक के लिए उसने चारों ओर देखा; एक साफ़, तेल दी हुई, शिकारी बन्दूक के स्थान पर, उसे अपने पास एक पुरानी सी भरनेवाली बन्दूक मिली, जिसकी नाल से जंग उखड़ रही थी, जिसके घोड़े भी निकले पड़ते थे और कुन्दों को कीड़ों ने खा रक्खा था। उसे अब सन्देह हुआ कि पहाड़ के गम्भीर-मुख उचक्कों ने ही उसे धोखा दिया है; वे शराब पिला-कर उसकी बन्दूक उड़ा ले गये हैं। भोटू भी ग़ायब हो गया था, पर वह तो किसी गिलहरी या तीतर के पीछे रह गया होगा। उसने उसे सीटी दी और उसका नाम लेकर पुकारा, पर सब व्यर्थ। केवल उसकी प्रतिध्वनि ने सीटी और आवाज को दुहरा दिया, पर कोई कुत्ता दिखाई न दिया।

गत सन्ध्या के जुए के स्थान को फिर जाकर देखने का उसने निश्चय किया, कि अगर उस गिरोह का कोई व्यक्ति मिले तो उससे अपना कुत्ता और बन्दूक माँगे। ज्योंही वह चलने को हुआ, अपने जोड़ों में उसे कुछ कड़ापन-सा मालूम हुआ, "और उसे जान पड़ा कि उसकी साधारण फ़ुर्ती भी चली गई है। "ये पहाड़ी घाटियाँ मुझे नहीं माफ़िक़ आतीं", रिप ने सोचा, और कहीं इसी खेल-खेल में अगर मुझे गठिया ने खाट से लगा दिया, तब तो बीबी वान विङ्किल के साथ बड़ी ख़ैरियत से मेरे दिन बीतेंगे।" कुछ कठिनाई से वह उस खन्दक में उतरा, उसे वह गली भी मिल गई जिसमें होकर वह और उसका साथी पिछली शाम को ऊपर चढ़े थे; पर उसे यह देखकर बड़ा विस्मय हुआ कि अब उस स्थान पर एक पहाड़ी झरना चट्टानों पर से उछलता हुआ अपने कोमल झरझर-नाद से उस तङ्ग घाटी को प्रतिध्वनित

कर रहा है। अस्तु, उसने वर्च, ससाफ्रास और हेजेल वृक्ष की झाड़ियों में बड़ी मुश्किल से रास्ता निकालकर किसी प्रकार किनारे-किनारे ऊपर चढ़ने का प्रयास किया। उसके पथ में जङ्गली अंगूरी बेलों ने एक पेड़ से दूसरे पेड़ तक लिपटकर जाल-सा फैला रक्खा था, जिनमें कभी-कभी वह उलझकर गिर पड़ता था।

अन्त में वह उस स्थान पर पहुँचा जहाँ पहाड़ी ढालों के बीच में खुलकर वह तङ्ग घाटी एक घिरे हुए अखाड़े के रूप में फैल गई थी; पर आज ऐसी खुली हुई जगह का वहाँ नाम तक नहीं था। चट्टानों की अभेद्य दीवारें थीं जिनके ऊपर से झाग भरे निर्झर की धारा नीचे आकर एक चौड़े गहरे खन्दक में गिर जाती थी, जो कि घिरे हुए जङ्गल की छाया से अन्धकारमय था। अस्तु, यहाँ आकर रिप को रुकना पड़ा। उसने फिर अपने कुत्ते को पुकारा और सीटी दी; पर, केवल धूप में चमकती हुई सीधी चट्टान के एक सूखे से झुके हुए पेड़ के ऊपर ऊँचे हवा में विहरते हुए कुछेक आलसी कौओं की काँव-काँव ने ही उसे उत्तर दिया; वे अपनी ऊँचाई पर सुरक्षित मानो अवहेलना से देखते हुए नीचे उस गरीब की उलझन पर उसे ताना दे रहे थे। अब क्या किया जाता? सुबह बीती जा रही थी, और नाश्ते के बिना रिप को बड़ी भूख लग आई थी। अपने कुत्ते और बन्दूक़ को छोड़ते उसे बड़ी वेदना हो रही थी; उधर पत्नी का सामना करने से वह घबराता था; पर पहाड़ों में भूखों तो नहीं मरा जा सकेगा। उसने सिर हिलाया, जंग से भरी हुई बन्दूक़ कन्धे पर रक्खी, और हृदय में सङ्कट और दुश्चिन्ता का भार लेकर घर की ओर क़दम बढ़ाये।

गाँव के पास पहुँचते-पहुँचते उसे कई लोग मिले, किन्तु जिसे वह जानता हो, ऐसा कोई नहीं मिला; इस पर उसे कुछ

आश्चर्य हुआ, क्योंकि वह समझता था कि आस-पास के इलाक़ों में वह सभी से परिचित है। इनकी पोशाक भी उस फ़ैशन से भिन्न थी, जिसका वह अभ्यस्त था। वे लोग भी उसी के समान अचम्भे के साथ उसकी ओर टकटकी लगाकर देखते थे। और जब कभी वे उस पर दृष्टि डालते, तो अपनी ठोड़ियों पर हाथ ज़रूर फेर लेते थे। इस क्रिया के लगातार होने के कारण रिप से भी वैसा ही हुआ, और तब महान् आश्चर्य से उसने देखा कि उसकी दाढ़ी फ़ुट भर की हो गई है!

वह अब गाँव के छोर पर पहुँच गया था। अजब ढङ्ग के बालकों की एक भीड़ शोर करती हुई और उसकी दाढ़ी की ओर सङ्केत करती हुई उसके पीछे दौड़ पड़ी। कुत्ते भी, जिनमें एक भी पुराना मुलाक़ाती उसे नज़र न आया, उसके आने पर भूँकने लगे। गाँव का गाँव बदल गया था, बढ़ गया था और अधिक बस गया था। मकानों की क़तारें थीं, जिन्हें उसने पहले कभी नहीं देखा था, और उसकी चिर परिचित उठने-बैठने की जो जगहें थीं वह सब लोप हो गई थीं। विचित्र नाम दरवाजों के ऊपर थे—और अजीब-अजीब चेहरे खिड़कियों में—सब कुछ अजीब हो गया था। उसका मस्तिष्क उसे धोखा देने लगा; उसे भ्रम होने लगा कि कहीं वह और उसके चारों ओर की दुनिया सभी अभिमन्त्रित तो नहीं कर दिये गये हैं। निःसन्देह यही उसका असली गाँव था, जिसे एक ही दिन पहले तो उसने छोड़ा था। वह काटस्किल पर्वत खड़ा है—वह चाँदी-सा हडसन दरिया फ़ासले पर बह रहा है—सभी पहाड़ियाँ और घाटियाँ बिलकुल वैसी की वैसी हैं जैसी कि वे हमेशा रही हैं—रिप बहुत उद्विग्न हो उठा—"रात के उस गिलास ने" वह सोचने लगा, "बुरी तरह मेरे दिमाग़ को गड़बड़ा दिया है!"

स्वयं अपने घर का रास्ता उसे थोड़ी कठिनता के बाद मिला। भय से मौन वह उसके निकट गया, प्रत्येक क्षण उसे बीबी वान विङ्किल की कर्कश आवाज़ सुनने की दुराशा थी। उसने मकान को टूटी-फूटी हालत में पाया—छत भीतर गिरी हुई, खिड़कियों के टुकड़े-टुकड़े हो रहे, दरवाज़े क़ब्ज़ों से अलग। एक भरभुखा कुत्ता, जो भोटू-सा लगता था, उसमें सिकुड़ा-सिकुड़ा फिर रहा था। रिप ने उसका नाम लेकर पुकारा, किन्तु उस गली के कुत्ते ने नथनों से आवाज़ निकाली, दाँत दिखाये और आगे खिसक गया। अवश्य ही इसकी चोट हृदयहीन थी। "मेरा अपना कुत्ता" ग़रीब रिप ने आह भर कर कहा, "मुझे भूल गया है!"

वह घर में घुसा। बात तो सच यह है कि बीबी वान विङ्किल इस घर को हमेशा सफ़ाई से रखती थीं। अब वही घर सूना, निर्जन, और जान पड़ता था छोड़ दिया गया है। इस वीरान वातावरण ने उसके सभी गृहस्थी भय को छा लिया—वह अपनी बीबी और बच्चों को पुकार उठा—सूने कमरे एक क्षण को उसकी आवाज़ से गूँज उठे, फिर सब निःस्तब्ध हो गया।

वह अब जल्दी से बाहर आया, और अपने पुराने अड्डे अर्थात् गाँव की सराय की तरफ़ लपक कर चला। पर वह भी अब उठ गई थी। लकड़ी की एक बड़ी सी ढचर इमारत उसके स्थान पर खड़ी थी, बड़ी-बड़ी खुली खिड़कियाँ, जिनमें से कुछ टूटी हुई, जिनको पुराने पेटीकोटों और हैटों से मूँद दिया गया था, और जिसके दरवाज़े पर पेण्ट से लिखा हुआ था—"दी यूनियन होटल, मालिक जोनाथन डूलिटिल।" उस विशाल वृक्ष के स्थान पर, जिसकी छाया में उस ज़माने में एक शान्तिपूर्ण छोटी सी डच सराय थी अब एक ऊँचा नङ्गा लट्ठ

गाड़ दिया गया था, जिसके सिरे पर लाल-लाल नाइट-कैप-सा कुछ दिखाई देता था और उस पर एक झण्डा फहरा रहा था जिसमें अङ्कित पट्टियों और तारकों का विचित्र सम्मिलन था—यह सब कुछ विचित्र था, और समझ में नहीं आता था। हाँ, मकान की चिह्न-पाटी पर उसने बादशाह जार्ज का लाल सा मुँह पहचान लिया। उसके नीचे बैठकर उसने कितने ही शान्ति के चुरुट सुलगाये थे, पर इसकी भी विचित्र प्रकार से काया-पलट हो गई थी। लाल कोट को नीला और बफ़-कोट बना दिया गया था। राज-दण्ड के बजाय हाथ में एक तलवार थी, सिर पर एक ओर को उठा हुआ हैट था, और उसके नीचे बड़े-बड़े अक्षरों में पेण्ट किया हुआ था, 'जनरल वाशिङ्गटन'।

दरवाज़े के आस-पास पहले की तरह लोगों की एक भीड़ थी सही, पर इन लोगों में से किसी को भी रिप याद न कर पाया। लोगों के स्वभाव ही बदल गये जान पड़ते थे। उनमें एक जल्दबाजी, गर्मागर्मी और बहस-मुबाहसे का वातावरण था, वह पहले की बलग़मी आलस्यपूर्ण निद्रालु शान्ति नहीं थी। उसने ढूँढ़ा, पर कहाँ अब वह वयोवृद्ध निकलस वेडुर, उसका चौड़ा मुँह, दुहरी ठोढ़ी और उसका साफ़ सा लम्बा पाइप, जिसमें बेकार की वक्तृता के बजाय तम्बाकू का धुँआ बोलता था; अथवा वह स्कूल-मास्टर वास बमल, जो पुराने अख़बारों के समाचार धीरे-धीरे, एक-एक करके सुनाया करता था। उनकी जगह पर अब एक सूखा-साखा सा आदमी, सूरत ऐसी मानो अजीर्ण हुआ हो, जेबों में बाँटने के इश्तहार भरे हुए, ज़ोरों से जनता के अधिकार—एलेक्शन—कांग्रेस-मेम्बर—स्वाधीनता—बङ्कर हिल—सन् छिहत्तर के वीर—और और अन्य शब्दों के विषय में वक्तृता झाड़ रहा था। यह सब भौचक्के वान विङ्किल के लिए एक कोरी बड़बड़ थी।

रिप की उपस्थिति, उसकी बढ़ी हुई अधपकी दाढ़ी, उसकी ज़ंग से भरी हुई बन्दूक़, उसकी मैली बेढङ्गी पोशाक, और स्त्रियों और बालकों की फ़ौज जो उसके पीछे इकट्ठा हो गई थी, ने शीघ्र ही होटल के राजनीतिज्ञों का ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने उसके चारों ओर भीड़ कर ली, और बड़े तमाशे के साथ उसको सिर से पैर तक देखने लगे। तब वक्ता महाशय व्यस्त भाव दिखाते हुए आगे आये और उसे जरा सा किनारे ले जाकर पूछा, "किसकी ओर वोट दिया है?" रिप निपट अज्ञानवश शून्य-भाव से आँख फाड़े देखता रह गया। एक और छोटे से ठिगने किन्तु कामकाजी आदमी ने उसका हाथ पकड़कर खींचा और कान में पूछा, "तुम संयुक्त राष्ट्रवादी हो कि प्रजातन्त्रवादी?" रिप के लिए इस प्रश्न को भी समझना उतना ही कठिन था। तब एक जानकार अहंमन्य बूढ़े सज्जन, सिर पर तिरछा उठा हुआ हैट दिये, कुहनी से सबको दाहिने-बायें करते, भीड़ में से रास्ता बनाकर आये और वान विङ्किल के सामने, एक हाथ कमर पर रखकर और एक अपनी छड़ी पर, इस प्रकार डटकर खड़े हो गये; और अपनी पैनी दृष्टि तथा तिरछे उठे हुए हैट को मानो उसकी आत्मा में घुसाते हुए, कड़े स्वर में उससे पूछा, "सारी जनता को अपने पीछे लिये और कन्धे पर बन्दूक़ रक्खे किसलिए तुम इस एलेक्शन में आये हो? क्या तुम्हारा इरादा गाँव में विद्रोह कराने का है?"

"अफ़सोस! सज्जनो" कुछ असमञ्जस और हैरानी से रिप ने ऊँची आवाज में कहा—"मैं एक ग़रीब अमनपसन्द आदमी इसी स्थान का बाशिन्दा और ताबेदार रिआया बादश; सर हूँ—.ख़ुदा की उस पर बरकत हो।" अपने-अपने

इस पर खड़ी हुई भीड़ में से एक आम शोर व बन्दूक़ क़ब्ज़ टोरी है! .ख़ुफ़िया है! भागा हुआ है! बाँध लो !खा जाय; इस ख़ात्मा करो इसका!" ाशय तो फ़ौरन

बड़ी कठिनता से तिरछे हैटवाले अहंमन्य सज्जन ने शान्ति स्थापित की और दस-गुनी गुरुता आपने माथे पर लाकर अभियुक्त से पूछा कि वह यहाँ क्यों आया और किसे ढूँढ़ रहा है। ग़रीब ने दीनता के साथ उसे विश्वास दिलाया कि वह कोई अनिष्ट नहीं करना चाहता, केवल अपने कुछ पड़ोसियों की खोज में आया था, जो होटल के आस-पास रहते थे।

"अच्छा तो—कौन हैं वे?—उनके नाम बताओ!"

रिप ने एक क्षण ज़रा सोचकर पूछा—"निकलस वेडूर कहाँ है?"

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा, फिर एक बूढ़े ने अपनी पीपनी सी पतली आवाज़ में उत्तर दिया, "निकलस वेडूर? अरे, उसे तो मरे अठारह बरस हो गये। क़ब्रिस्तान में उसकी मज़ार पर एक लकड़ी की त़ख्ती थी, जिसमें उसके बारे में सब लिखा था। अब तो वह भी सड़कर ख़त्म हुई।"

"ब्राम डचर कहाँ है?"

"ओह, वह तो शुरू लड़ाई में फ़ौज में भरती हो गया था; कोई-कोई कहते हैं कि वह स्टोनी प्वाइंट के हमले में मारा गया; और लोग कहते हैं कि वह एंटनी नोज़ के पास आँधी में डूब गया। मुझे पता नहीं। वह फिर कभी नहीं आया।"

"वान बमल स्कूल-मास्टर कहाँ?"

"वह भी लड़ाई में चला गया था; बड़ा फ़ौजी जरनैल था; और अब कांग्रेस में है।"

घर में और अपने मित्रों में ऐसे-ऐसे दुःखद परिवर्तन देख- इस प्रकार संसार में अपने आपको अकेला पाकर सर्द हो गया। प्रत्येक उत्तर इतने दीर्घ समय के और उन ऐसे विषयों का, लेखा लेता था कि जिन्हें के वश की बात नहीं थी; यह सब तो उसे और भी

हैरान किये देता था : लड़ाई—कांग्रेस—स्टोनी प्राइण्ट ! अब और किसी मित्र के बारे में पूछने का उसमें साहस नहीं था, पर नैराश्य की पीड़ा से वह चिल्ला उठा,—"क्या यहाँ कोई भी रिप वान विङ्किल को नहीं जानता ?"

"ओह, रिप वान विंकिल !" दो तीन व्यक्ति बोल उठे—"क्यों नहीं, अवश्य ! वह, वह रहा रिप वान विंकिल, जो पेड़ की टेक लगाये खड़ा है।"

रिप ने देखा तो उसे हूबहू अपना वह नमूना नजर आया, जैसा कि वह पहाड़ के ऊपर जाने के समय था; देखने में उतना ही आलसी, और निःसन्देह वैसा ही फटे-हाल। अब तो बेचारा पूरी तरह चक्कर में पड़ गया। अपने अस्तित्व पर ही उसे भ्रम होने लगा, कि वह स्वयं अपने आप है या कोई दूसरा व्यक्ति। उसके इसी दुबिधा और आश्चर्य के बीच में टेढ़े हैटवाले महाशय ने उससे पूछा, कि तुम हो कौन और तुम्हारा नाम क्या है।

"अल्लाह जानता है", अपनी बुद्धि से हार मानकर वह आखिर कह उठा, "मैं स्वयं आप नहीं हूँ—मैं कोई दूसरा ही व्यक्ति हूँ—मैं वह हूँ उधर—नहीं—वह कोई और है जिसने मेरे जूते कपड़े पहन रक्खे हैं—कल रात को मैं आप स्वयं था, पर मुझे पहाड़ पर नींद ने दबा लिया और वे लोग मेरी बन्दूक को बदल गये, सब चीज बदल गई, और मैं बदल गया, और मैं नहीं बता सकता क्या मेरा नाम है और कौन मैं हूँगा !"

सड़क के तमाशाई अब एक-दूसरे की ओर देखने, सर हिलाने और अर्थ-पूर्ण भाव से आँख मारने तथा अपने-अपने माथे ठनकाने लगे। यह भी काना-फूसी थी कि बन्दूक क़ब्जे में कर ली जाय और बूढ़े को शरारत से बाज़ रक्खा जाय; इस तजवीज़ के होते ही तिरछे हैटवाले अहंमन्य महाशय तो फ़ौरन

वहाँ से खिसक गये। इस महत्त्वपूर्ण अवसर पर एक सुन्दर-सी जवान स्त्री दाढ़ीवाले मनुष्य को देखने के वास्ते भीड़ में से होकर आई। एक तन्दुरुस्त बच्चा उसकी गोद में था, जो उसकी सूरत से डर गया और रोने लगा। "रे चुप हो जा, रिप!" उसने डाँटा, "चुप हो जा, मूर्ख; यह बूढ़ा तुझे तकलीफ नहीं देगा।" बच्चे के नाम से, मा के हाव-भाव और उसके बोलने के स्वर से उसके मन में स्मृतियों की एक शृङ्खला जाग उठी।

"ऐ भली स्त्री, तेरा नाम क्या है?"

"जूडिथ गार्डिनिएर।"

"और तेरे पिता का नाम?"

"आह, बेचारे गरीब का नाम रिप वान विंकिल था; आज बीस साल हुए कि वह बन्दूक उठाकर घर से चले गये थे, तब से उनका कोई पता नहीं—खाली उनका कुत्ता घर लौट आया था; पर उन्होंने स्वयं गोली मार ली या रेड-इण्डियन उन्हें उठा ले गये, कोई नहीं बता सकता। मेरी तो तब एक छोटी-सी लड़की की उम्र थी।"

रिप को बस अब एक प्रश्न और पूछना था; पर उसे उसने लड़खड़ाती जबान से पूछा—"तुम्हारी मा कहाँ?"

"ओह, वह भी उनके थोड़े समय बाद गुजर गईं। न्यू-इँगलैण्ड के एक बिसाती पर गुस्सा होते समय उनकी कोई नस फट गई थी।"

कम से कम इस समाचार में एक बूँद सांत्वना के जल की तो मिली। वह भोला-भाला मनुष्य अब अपने को अधिक जब्त न कर सका। उसने अपनी लड़की और उसके बच्चे को अङ्क भर लिया। "मैं ही तुम्हारा बाप हूँ।" वह रो पड़ा,

"वही जवान रिप वान विंकिल—जो आज बूढ़ा रिप वान विंकिल है ! क्या यहाँ कोई ग़रीब रिप वान विंकिल को नहीं जानता ?"

सभी आश्चर्य-चकित रह गये। तब तक भीड़ में से गिरती-पड़ती एक बुढ़िया निकली, आँखों पर हाथ रखकर और उसके नीचे से एक क्षण उसके मुँह की ओर ध्यान से देख कर बोल उठी, "बहुत अच्छी तरह ! यह रिप वान विंकिल ही है—यह स्वयं वही है। घर को स्वागत, पुराने पड़ोसी ! अरे, तुम कहाँ रहे हो इन बीस बरसों तक ?"

रिप की कथा शीघ्र ही पूरी हो गई। कारण, कि उसके लिए तो ये पूरे बीस साल एक रात की तरह बीत गये थे; पड़ोस के लोगों ने जब सुना तो आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। कुछ तो एक-दूसरे की तरफ़ आँखें मारते और मन ही मन हँसते नज़र आये। तिरछे हैटवाले अहंमन्य महाशय ने, जो पहली शङ्का की बात मिटते ही फिर मैदान में आ मौजूद हुए थे, अपने होठों के दोनों कोण मोड़ पर बिचकाये और अपना सिर हिलाया—इस पर, आम तौर से, पञ्चायत भर ने सिर हिलाये।

अतएव यह निश्चय हुआ कि बूढ़े पीटर वाण्डर डङ्क की राय ली जाय, जो सड़क पर इस समय धीरे-धीरे इसी ओर चला आ रहा था। वह अपने ही नाम के इतिहासज्ञ का, जिसने इस प्रान्त का एक सबसे प्राचीन विवरण लिखा है, वंशज था। पीटर गाँव का सबसे प्राचीन निवासी था, और अड़ोस-पड़ोस की सभी अद्भुत घटनाओं और किंवदन्तियों का ख़ूब अच्छा जानकार था। रिप को उसने एकदम पहचान लिया, और उसकी कहानी की सत्यता अत्यन्त सन्तोषपूर्ण रीति से प्रमाणित कर दी। उपस्थित सज्जनों को उसने विश्वास दिलाया कि उसके इतिहासज्ञ पूर्वज के आधार पर यह सत्य है कि काटस्किल पर्वतों में हमेशा से अद्भुत प्राणियों का निवास

रहा है। और यह भी सत्य है कि इस नदी और प्रान्त का प्रथम अन्वेषक महान् हेण्ड्रिक हडसन, अपने 'न्यूमून' (अर्ध-चन्द्र) नामक जहाज़ के मल्लाहों के साथ, हर बीस साल बाद आकर एक प्रकार का रत-जगा करते हैं; इस प्रकार उन्हें अपने साहस की कर्म-भूमि को फिर-फिर देखने आने का, तथा अपने नाम की नदी और नगर पर संरक्षक की दृष्टि बनाये रखने का सुअवसर प्राप्त हो जाता है। और एक बार उसके पिता ने उन्हें अपनी पुरानी डच-पोशाक में पहाड़ की एक खुली हुई कन्दरा में 'नाइन-पिन' का खेल खेलते देखा था; और फिर स्वयं उसने गर्मियों के एक तीसरे पहर दूर बादलों की गरज के समान आता हुआ उनके गोलों का शब्द सुना था।

इस कथा का अन्त यह, कि भीड़ उठ गई, लोग अपने अधिक महत्त्वपूर्ण एलेक्शन के कामों में लगे। रिप की लड़की उसे अपने साथ रहने को लिवा ले गई; उसका एक ढङ्ग से सजा हुआ छोटा सा मकान था, एक बलिष्ठ हँसमुख खेतिहर उसका पति था, जो रिप को ध्यान आया कि उसकी पीठ पर चढ़ने-वाले दङ्गई लड़कों में से एक था। और रिप का बेटा और उत्तराधिकारी, जिसे उसने पेड़ से टिका हुआ खड़ा देखा था, जो उसी का दूसरा रूप था, उसको खेती के काम पर लगा दिया गया; पर, अपने काम को छोड़कर और कोई भी काम करना—इस पुश्तैनी स्वभाव का ही उसने परिचय दिया।

रिप ने अब फिर अपनी पुरानी चाल, अपनी पुरानी आदतें अख़्तियार कर लीं। शीघ्र ही उसको अपने बहुत से पुराने सङ्गी-साथी मिल गये, यद्यपि समय की रगड़ से वे सब घिस-घिसा गये थे; लेकिन उसको उठती हुई पीढ़ी में मित्रता पैदा करना अधिक रुचिकर लगा, और शीघ्र ही वह उनके बीच अत्यधिक सर्व-प्रिय हो गया।

घर पर चूँकि उसे कुछ नहीं करना होता था, और अब वह उस सुखमय आयु में भी पहुँच गया था जब कि मनुष्य बिना सोचे-विचारे कुछ नहीं कर बैठता, अतः उसने फिर सराय के दरवाजे की बेंच पर अपना स्थान ग्रहण कर लिया। युद्ध के पूर्वकालीन युग के ऐतिहासिक व्यक्ति की तरह और गाँव के पुरखों की तरह, उसका सम्मान होता था। कुछ काल बीतने पर ही वह ग्राम-चर्चा के धारा-क्रम को पकड़ सका, अथवा उन अद्भुत घटनाओं को समझ सका जो उसकी निद्रा के समय में घटित हो गई थीं। मसलन किस प्रकार एक क्रान्तिकारी युद्ध हो चुका था, किस प्रकार गये-गुजरे इँगलैण्ड की दासता से देश मुक्त हो चुका था—और कैसे वह हजूर शाहंशाह जार्ज तृतीय की प्रजा न रहकर अब संयुक्त राष्ट्र का एक स्वतन्त्र देशवासी था। वास्तव में रिप कोई राजनीतिज्ञ नहीं था; देशों और साम्राज्यों के उथल-पुथल का उसके मन पर केवल नाम-मात्र को असर होता था; लेकिन तानाशाही का एक रूप था जिसकी अधीनता में वह दीर्घ काल से कराह रहा था—और वह स्त्रैण शासन। ख़ुशी की बात थी कि वह शासन अब समाप्त हो चुका था। दाम्पत्य के जुए से अब आकर वह अपनी गरदन निकाल सका था। अब वह बीबी वान विंकिल के अत्याचार से अभय होकर अन्दर-बाहर जब चाहे आ-जा सकता था। फिर भी, यदि कोई उसका नाम ले लेता, तो वह अपना सिर हिलाता, कन्धों को हरकत देता, और ऊपर की ओर दृष्टि करके देखने लगता; इससे चाहे यह समझ लिया जाय कि उसने अपने आपको अपने भाग्य पर ही छोड़ दिया था, या यह कि वह अपनी मुक्ति पर आनन्दित था।

मि० डूलिटिल के होटल पर जो भी परदेशी आता, उसे वह अपनी कथा सुनाता। पहले तो यह देखा गया कि प्रत्येक बार

सुनाते समय कुछ बातों में अन्तर आ जाता, जिसका कारण नि:सन्देह यह था कि वह कुछ ही दिन पूर्व जागा था। अन्त में कथानक का बिलकुल वही रूप हो गया जो मैंने ऊपर दिया है; और आस-पास तक कोई पुरुष, स्त्री या बच्चा ऐसा नहीं था जिसको यह सम्पूर्ण कण्ठस्थ न हो। कुछ लोग हमेशा यह दिखाते रहे कि उन्हें इसकी सत्यता में सन्देह है; वे इस बात पर जोर देते रहे कि रिप इस सारे समय भर स्मृति-शून्य रहा, और कथा का यही एक स्थल ऐसा था जहाँ वह हमेशा अपने आपको बचाता था। लेकिन क़रीब-क़रीब सभी पुराने डच-निवासियों ने इसे पूर्णत: सत्य स्वीकार किया। अब तक भी गर्मियों में शाम को काटस्किल पहाड़ों पर कोई आँधी-पानी की गड़गड़ाहट ऐसी नहीं होती जब वे यह नहीं कल्पना करते कि हेण्ड्रिक हडसन और उसके मल्लाह साथी 'नाइन-पिन' का खेल खेल रहे हैं। और अपनी बीबियों के सताये हुए आस-पास के सभी गृह-पतियों की, जब जिन्दगी उन्हें दूभर हो जाती है, साधारणत: यही मनोकामना होती है कि कहीं वे भी रिप वान विंकिल के गिलास का एक घूँट भर सकते जो उन्हें शान्ति प्रदान कर देता!

छाया

आप जो इसे पढ़ेंगे जीवित लोगों में से होंगे; किन्तु मैं जो लिख रहा हूँ तब तक कभी का छाया-लोक में पहुँच चुका हूँगा। क्योंकि, वस्तुतः जब इन संस्मरणों पर मानव की दृष्टि पड़ेगी, उसके पहले कितनी ही अद्भुत घटनाएँ घटित हो चुकेंगी, कितने ही गुप्त रहस्य प्रकट हो जायँग, और कितनी ही शताब्दियाँ बीत चुकेंगी। और इनके अवगत होने पर, कुछ तो इन पर अवि-श्वास करेंगे, कुछ शङ्का करेंगे, और फिर कुछ थोड़े से व्यक्ति ऐसे भी होंगे जिन्हें लौह लेखनी द्वारा अङ्कित इन अक्षरों पर मनन करने की पर्याप्त सामग्री मिलेगी।

यह साल आतङ्क का साल रहा था, और ऐसे भावावेशों का साल जो कि आतङ्क से भी प्रबल थे, कि जिनके लिए पृथ्वी पर कोई नाम नहीं। कारण कि, अनेक लक्षण प्रकट हुए थे, विलक्षण घटनाएँ घटित हुई थीं; और दूरादूर, क्या जल क्या स्थल, सर्वत्र महामारी ने अपना काल-रूप फैला रक्खा था। तथापि, जिन लोगों की ज्योतिष में गति थी उन्हें निःसन्देह ज्ञान हो गया था कि नक्षत्र अनिष्टकर हैं; और अन्य लोगों के साथ मुझे, युनानी ओइनौस, को भी यह प्रत्यक्ष हो गया था कि सात सौ चौरानबे वर्षवाला परिवर्तन-चक्र अब पूर्ण हो चुका है, जब कि मेषराशि में प्रवेश करते ही बृहस्पति का संयोग रक्ताभ शनि से होता है। आकाशगामी ग्रहों की यह अनोखी स्थिति, यदि मैं बहुत नहीं भूलता, केवल बाह्य प्रकृति पर ही नहीं, बल्कि मनुष्य मात्र के आत्मा, भाव और विचारों में प्रकट हो उठी थी।

पड़ी स्थिर रुकी रही, द्वार के मेहराब के नीचे; और हिली नहीं, और न एक शब्द बोली, किन्तु वहीं अचल हो गई, और स्थिर रही। और जिस द्वार पर वह छाया रुकी हुई थी, अगर मुझे सही-सही याद है, वह कफ़न से लिपटे हुए युवक ज़ायलस के पाँयताने की तरफ़ था। किन्तु, हम सातों जो वहाँ बैठे थे, परदों में से छाया को निकालता हुआ देख लेने के बाद, स्थिरता से उसकी ओर दृष्टिपात करने का साहस न कर सके; अस्तु, हम आँखें नीची किये आबनूस के गहन-तम दर्पण में देखते रहे। अन्त में मैंने अर्थात् ओइनास ने धीमे शब्दों में छाया से उसका वास-स्थान और नाम पूछा। और छाया ने उत्तर दिया, "मैं छाया हूँ; और काल-कलुषित चरोनियन नहर की सीमा पर जो भ्रामक अल्यूजियन के स्वप्निल मैदान हैं उनसे मिले हुए टोलेमायस की समाधियों के निकट मेरा वास है।" और तब भय और आतङ्क से हम सातों अपनी जगह पर स्तम्भित हो उठे, और सिहरकर खड़े हो गये और निराश तथा भयभीत होकर थर-थर काँपने लगे। क्योंकि छाया के बोल में किसी एक व्यक्ति का स्वर नहीं, बल्कि अनगिनती व्यक्तियों के स्वर मिले हुए थे, जो प्रत्येक शब्दांश में भिन्न ध्वनि लिये हुए थे; और वे कितने ही सहस्र विगत बन्धुओं के चिर-परिचित और सुस्मृत स्वरों के क्षीण तथा मिश्रित रूप में आकर हमारे कानों में पड़े।

युवती कि चीता

बहुत युग बीते एक अर्धसभ्य राजा राज्य करता था। दूरस्थित उन्नतिशील लैटिन पड़ोसियों के प्रभाव से परिष्कृत होकर उसके विचार प्रखर हो गये थे अवश्य, फिर भी वे फैले हुए, कल्पनामय और अधकच्चे-से थे, जो उसकी अर्ध-विकसित अवस्था के अनुरूप ही था। उसके मन में नाना प्रकार की भाव-नाएँ उठती थीं, पर साथ ही ऐसा अबाध उसका शासन था कि इच्छा होने पर अपनी विभिन्न कल्पनाओं को वह सत्य में प्रत्यक्ष कर देता था। उसके पारिवारिक तथा राजनीतिक शरीर का प्रत्येक अङ्ग जब तक नियमित रूप से अपना कार्य करता रहता, वह बड़ा प्रसन्न-चित्त दीखता, किन्तु कहीं जब कोई अटक पैदा हो जाती, और कुछ कार्य-क्षेत्रों की सीमाएँ अपने लक्ष्य से दूर हट जातीं, तब तो प्रसन्नता से वह और खिल उठता; कारण कि और किसी बात में उसको इतना आनन्द नहीं मिलता था, जितना कि टेढ़े को सुलझाने और विषम को सम करने, दबाकर बराबर करने में मिलता था।

उन विदेशी अनुकरणों में, जिनके प्रभाव से उसकी बर्बरता आधी हो गई थी, एक योजना सार्वजनिक अखाड़े की थी, जिसमें मानवी और पाशविक साहस प्रदर्शन द्वारा प्रजा का मस्तिष्क सभ्य और संस्कृत बनाया जाता था।

पर यहाँ भी उसकी मौलिक बर्बरतापूर्ण कल्पना ने अपना प्रभुत्व दिखाया। यह सार्वजनिक शाही अखाड़ा इसलिए नहीं बनवाया गया था कि जनता पशुओं से कुश्ती लड़नेवालों की अन्तिम हुङ्कार सुने, और न इसलिए कि धार्मिक मत-मतान्तरों

और भूखे जबड़ों के सङ्घर्ष का अवश्यम्भावी अन्तिम निर्णय देखे, बल्कि वह जनता की मानसिक शक्तियों के विकास और उन्नति जैसे अधिक समीचीन उद्देश्यों की पूर्ति करता था। इसी विशाल अखाड़े में, जिसके चारों ओर वृत्ताकार गैलरियाँ, रहस्य-पूर्ण तहखाने और गुप्त मार्ग बने हुए थे, विशुद्ध न्याय-कार्य का सम्पादन होता था, जहाँ कि पक्षपात-रहित और नितान्त अदूषित संयोग के फ़ैसले पर अपराधी को दण्ड और निर्दोषी को पुरस्कार मिलता था।

जब किसी प्रकार प्रजाजन पर एक ऐसे काफ़ी महत्त्वपूर्ण अपराध का आरोप किया जाता जिसमें राजा को दिलचस्पी होती, तो सर्वसाधारण को सूचना दे दी जाती कि अमुक निश्चित दिवस पर अपराधी के भाग्य का निर्णय 'शाही अखाड़े' में होगा। यह नाम इस स्थान के बिलकुल उपयुक्त ही था, क्योंकि यद्यपि इसका आकार-प्रकार और नक़्शा बाहर दूर के देशों से लिया गया था, किन्तु इसका उद्देश्य सम्पूर्णतः उसी के मस्तिष्क की उपज थी, जिसके नाख़ूनों तक राजपन घुसा हुआ था, फिर भी रूढ़ियों का पालन अपने मनमाने ढङ्ग से करता था, और जो प्रत्येक विचार और कार्य के रूप में जिसे वह बाहर से ग्रहण करता था, अपने बर्बर आदर्शवाद का गहरा पुट मिला देता था।

जब सब जनता गैलरियों में एकत्र हो जाती और अखाड़े के एक पार्श्व में सभासदों के सहित राजा अपने शाही सिंहासन पर उच्चासीन हो लेता, तब वह सङ्केत करता, जिस पर उसके नीचे की तरफ़ का एक द्वार खुल जाता और अभियुक्त उसमें से निकलकर अखाड़े में दाख़िल होता। इस घिरे हुए क्षेत्र में दूसरी ओर ठीक उसके सामने बराबर बिलकुल एक-से दो दरवाज़े थे। अभियुक्त का कर्तव्य होता था—यह उसका अधिकार था—कि वह सीधा इन दरवाज़ों तक जाकर इनमें

एक को खोले। वह दोनों में चाहे जिस द्वार को खोल सकता था। वह किसी निर्देश या प्रभाव के अधीन नहीं होता था, एक मात्र वह पूर्व-कथित निष्पक्ष और अदूषित संयोग ही उसका सहायक होता था। यदि वह एक को खोलता, तो उसमें से एक क्षुधित चीता, ऐसा भयानक और खूँख्वार, जैसा कहीं उपलब्ध हो सकता, निकलता, और फ़ौरन उस पर झपटकर, उसे अपराध का फल देने के लिए उसकी बोटी-बोटी कर डालता। ज्योंही अभियुक्त का मामला इस प्रकार तय हो जाता, शोक के लौह-घण्ट बजाये जाते, अखाड़े के बाहर नियुक्त किराये के मातम-पीटनेवाले उच्च स्वर से रोदन करते, और सारी दर्शक-मण्डली, सिर झुकाये, दुखी मन से इस प्रकार सन्ताप करती हुई अपने घरों को चली जाती, कि 'वह कैसा सुन्दर जवान अथवा कितना सम्मानित बूढ़ा था, और कैसी कठोर मृत्यु के योग्य वह निकला।'

लेकिन अगर अभियुक्त ने दूसरा द्वार खोल दिया तो उसमें से एक युवती निकलकर आती, जो उसकी आयु और पद के अनुरूप स्वयं राजा-द्वारा राज्य भर की ललनाओं में से चुनी हुई होती थी, और तुरन्त उसी के साथ, निरपराध होने के पुरस्कार में उसका विवाह कर दिया जाता। इस बात की जरा भी परवा न की जाती कि उस आदमी के पहले से स्त्री और बाल-बच्चे हो सकते हैं, या अपने इच्छानुकूल वह किसी और को ही प्यार करता है। अतएव, उपरोक्त परिस्थिति की भाँति, विवाह-कर्म भी उसी क्षण और उसी स्थान में सम्पन्न हो जाता। राजा के स्थान के नीचे का एक दूसरा दरवाजा खुलता और एक पुरोहित निकलकर वहाँ आता जहाँ वह जोड़ा एक साथ खड़ा हुआ होता। उसके पीछे-पीछे बाजेवाले और मङ्गलाचार गाती हुई बालिकाएँ, नाचनेवाली सुनहरी

तुरहियाँ बजाती हुई और विवाहोत्सव का नाच नाचती हुई आतीं; और उसी समय खूब हर्ष-ध्वनि के साथ विवाह-संस्कार पूर्ण करा दिया जाता। तब पीतल के घण्टे-घड़ियाल मङ्गल-नाद करने लगते, एकत्र जनता आशीर्वाद की वर्षा करने लगती, और निरपराध व्यक्ति के पथ में आगे-आगे बच्चे फूल बिखेरते चलते। इस प्रकार वह अपनी वधू को घर ले जाता।

यह था राजा के न्याय करने का अर्ध-सभ्य ढङ्ग। इसका पूर्णतः निष्पक्ष होना स्पष्ट है। अभियुक्त यह नहीं जान सकता था कि किस द्वार से स्त्री निकलेगी। जिसे भी उसका मन कहता, वह खोलता; उसे लेश-मात्र भी पता नहीं हो सकता था कि दूसरे ही क्षण वह चीते का एक ग्रास बन जायगा या उसकी शादी हो जायगी। कभी चीता एक द्वार से बाहर आता था और कभी दूसरे से। इस अदालत के निर्णय न्यायपूर्ण ही नहीं बल्कि पूर्णतः निर्णयात्मक होते थे। अपने आपको अपराधी पाते ही अभियुक्त उसी क्षण अपने आपको दण्ड दे चुकता था; और अगर निरपराध हुआ, तो फ़ौरन् उसे पुरस्कार मिल जाता, चाहे उसे पसन्द आये या न आये। लेकिन 'शाही-अखाड़े' के फ़ैसले से बचने का कोई रास्ता नहीं था।

यह संस्था अत्यधिक सर्व-प्रिय थी। जब जनता इन महत्त्व-पूर्ण न्याय के अवसरों पर वहाँ इकट्ठा होती तो उसे बिल्कुल पता न होता था कि वह वहाँ पर ख़ूनी हत्या-काण्ड देखने आई है कि विवाहोत्सव का आनन्द लेने। इस अनिश्चितता के कारण यह अवसर इतना दिलचस्प हो जाता था कि जितना वह अन्यथा कभी न हो सकता। इस प्रकार एक ओर तो जनता का मनोरञ्जन और मनोविनोद होता, और दूसरी ओर समाज के विचारशील व्यक्ति इस व्यवस्था पर किसी तरह के अन्याय का दोष भी नहीं लगा सकते थे। क्योंकि,

आखिर क्या सब कुछ अभियुक्त के ही हाथ में नहीं छोड़ दिया जाता था ?

इस अर्ध-सभ्य राजा की एक लड़की थी। उसका यौवन-विकास उसी की अत्यन्त कल्पनापूर्ण भावनाओं के समान हुआ था, और उसका हृदय भी उसी जैसा गर्म और गर्वीला था। जैसा कि ऐसी दशाओं में होता है, वह उसकी आँख का तारा और मानव-संसार में उसको सब से प्रिय थी। सभा-सदों में एक ऐसा उच्च-वंशी पर निम्न-पदाधिकारी नव-युवक था, जैसा प्रेम-कथाओं में हमें बहुधा मिलता है, जिसका प्रेम राजकन्या से हो जाता है। अस्तु, यह राजकन्या अपने प्रेमी से भले प्रकार सन्तुष्ट थी, कारण कि वह राज्यभर में अपने सौंदर्य और वीरता में अद्वितीय था, और वह उसे प्यार भी इतना करती थी कि अर्ध-सभ्य ढङ्ग का होने के ही कारण उनका प्रेम अत्यधिक गर्म और सुदृढ़ था। महीनों तक यह प्रेम-व्यापार आनन्दपूर्वक चलता रहा, यहाँ तक कि एक दिन राजा को इसके अस्तित्व का पता चल गया। राजा को ऐसी परिस्थिति में अपने कर्तव्य के प्रति कोई संशय या द्विविधा ज़रा भी नहीं हुई। तुरन्त नवयुवक को जेल में डाल दिया गया, और शाही अखाड़े में उसके फ़ैसले के लिए एक दिन नियत हो गया। यह अवसर विशेष महत्त्व का था, इसमें सन्देह नहीं। अपनी समस्त प्रजा की तरह राजा को भी इस मामले की कार्यवाही और निर्णय में ख़ूब दिलचस्पी थी। ऐसी घटना पहले कभी नहीं हुई थी। प्रजाजन में से कभी किसी ने राजा की कन्या से प्रेम करने का साहस नहीं किया था। बाद के वर्षों में तो ऐसी बातें साधारणतया काफ़ी होने लगीं; पर उस काल में यह कम नवीनता या आश्चर्य की बात नहीं थी।

राज्य भर में सबसे खूँख़ार और जङ्गली चीते के लिए पशुओं के कटघरों का निरीक्षण किया गया, जिसमें से अखाड़े के लिए

सबसे भयानक हिंस्र छाँटा जा सके; और अधिकारी विशेषज्ञों द्वारा देश भर की सुन्दर नवयुवतियों की वर्णानुसार जाँच की गई, जिससे कि, यदि भाग्य का निर्णय नवयुवक के विरुद्ध न हो तो, उसको अपने अनुरूप दुलहिन मिल सके। यह सच है कि इस बात को सब कोई जानते थे कि जो अभियोग नवयुवक पर लगाया गया था, वह उसने किया था। उसने राजकन्या से प्रेम किया था; और इसे अस्वीकार करने की बात न स्वयं वह, न राजकन्या और न कोई और मनुष्य सोच सकता था; पर राजा तो उस न्यायालय की कार्य-प्रणाली में, जिसमें कि उसे इतना आनन्द और सन्तोष मिलता हो, ऐसी बातों में हस्तक्षेप की कल्पना नहीं कर सकता था। फल जैसा भी हो, युवक का तो फ़ैसला ही करना होगा। इस कार्य-क्रम के अवलोकन से राजा को जो एक कलात्मक सुख की अनुभूति होगी, उससे इस बात का निर्णय हो जायगा कि नवयुवक ने राजकुमारी से प्रेम करके अनुचित किया या नहीं।

निश्चित दिन भी आ गया। दूर और नजदीक से लोग जमा हुए और अखाड़े की गैलरियों में भर गये; प्रवेश न पा सकने पर भीड़ दीवारों के बाहर बढ़ चली। राजा ने सभा-सहित उन दोनों दरवाजों के सामने की ओर अपना स्थान ग्रहण किया—उन भाग्य-निर्णायक दरवाजों के सामने, जो भयानक रूप से समान थे।

सब तैयार था। सङ्केत दिया गया। राज-सभा के स्थान के नीचे का एक द्वार खुला, और उसमें से निकलकर राजकुमारी का प्रेमी अखाड़े में आया। उसका सुन्दर स्वच्छ विशाल शरीर देखकर दर्शकों ने चिन्ता और प्रशंसा के दबे स्वरों में उसका स्वागत किया। ऐसा भी कोई सजीला जवान उनके समाज में था, दर्शक नहीं जानते थे। कोई आश्चर्य नहीं, अगर

राजकुमारी उसको प्यार करती थी ! कितना भयावह था उसका वहाँ होना !

नवयुवक जैसे ही अखाड़े की ओर बढ़ा, वह रीत्यनुसार राजा के आगे मस्तक नवाने के लिए घूमा। पर उस राजकीय व्यक्ति के विषय में वह बिलकुल नहीं सोच रहा था; उसकी दृष्टि तो राजकुमारी पर गड़ी हुई थी, जो अपने पिता के दाहिनी ओर बैठी थी। हो सकता था, यदि बर्बरता के संस्कार का उसमें लेश न होता, तो वहाँ इस समय वह बैठी न होती; पर अत्यधिक भावुक मन की उत्तेजना उसकी उपस्थिति को ऐसे अवसर पर रोक नहीं सकती थी जिससे स्वयं उसका इतना भयानक सम्बन्ध था। जिस क्षण से यह राजाज्ञा निकली थी कि उसके प्रेमी के भाग्य का निर्णय शाही अखाड़े में होगा, उस क्षण से राजकुमारी ने, क्या रात क्या दिन, सिवा इस घटना के और उससे सम्बन्धित अन्य अनेक विषयों के और कुछ नहीं सोचा था। उससे पहले ऐसे मामलों में दिलचस्पी रखनेवाले किसी भी व्यक्ति की अपेक्षा अधिक प्रभाव, शक्ति और व्यक्तित्व-बल रखने के कारण, ऐसा काम वह कर सकी कि जो किसी ने नहीं किया था—उसने दरवाजों का भेद मालूम कर लिया था। वह जानती थी कि उन दरवाजों के पीछे दोनों कमरों में से किसमें सामने से खुला हुआ चीते का कटघरा रक्खा था और किसमें युवती प्रतीक्षा कर रही थी। ये भारी-भारी दरवाजे अन्दर की तरफ़ से चर्म की मोटी-मोटी तहों से मढ़े हुए थे। अतः यह असम्भव था कि इनमें से किसी एक का कुण्डा खोलने के लिए जो मनुष्य उनके नजदीक जाय, उसको भीतर से कोई ध्वनि या सङ्केत मिल सके; पर स्वर्ण-लोभ और अपने नारी-हृदय की इच्छा-शक्ति के बल पर राजकुमारी को वह रहस्य प्राप्त हो गया था।

और वह केवल इतना ही नहीं जानती थी कि किस कमरे में वह लज्जायुक्त कान्तिमती युवती (यदि संयोग से उसी का दरवाज़ा खोला गया) बाहर आने के लिए तैयार खड़ी होगी, बल्कि वह उस युवती को भी जानती थी कि वह कौन है। वह राज-दरबार की एक अत्यन्त सुन्दरी और अत्यधिक लावण्यमयी युवती थी जो कि नवयुवक के लिए उस दशा में चुनी गई थी, जब वह अपनी स्थिति से इतना ऊपर किसी की चाह करने के अपराध से निर्दोष प्रमाणित हो जाय। और उस स्त्री से राजकुमारी को घृणा थी। उसने अक्सर इस युवती को अपने प्रेमी की ओर दृष्टि डालते देखा था (या कल्पना की थी कि देखा था) और कभी-कभी तो उसे ऐसा जान पड़ता था कि इन कटाक्षों को स्वीकार किया गया था और इनका जवाब भी दिया गया था। जब-तब उन्हें बातें करते भी उसने देखा था; एक ही दो क्षण के लिए सही, पर थोड़े क्षणों में भी बहुत कुछ कहा जा सकता है; हो सकता है, विषय बहुत ही साधारण रहा हो, पर वह यह जान कैसे सकती थी? बालिका वह सुन्दरी थी, पर जिसको राजकुमारी प्यार करे, उस पर आँख डालने का दुःसाहस उसने किया था। अतः उस नारी के प्रति, जो उस स्तब्ध द्वार के पीछे खड़ी लाज से आरक्त हो रही और काँप रही थी, उसके हृदय में अपने पुराने पूर्णतः बर्बर पूर्वजों का उत्तेजित रक्त खौल उठता था।

जब मुड़कर उसके प्रेमी ने उसकी ओर देखा, और आँखें उसकी आँखों से मिलीं, जहाँ चिन्ताकुल मुखों के विशाल सागर में वह बैठी हुई थी, और उतना पीला, सफ़ेद मुख किसी का नहीं था जितना कि उसका, तब उस नवयुवक ने तुरन्त अपनी सहज बोध-शक्ति से यह जान लिया—क्योंकि जिनके दिल एक हो जाते हैं उन्हें यह शक्ति प्राप्त हो जाती है—कि राजकुमारी को

सुना था; उसने जब के पीछे चीता घात लगाये हुए हैं और पीछे लिये हुए पुरोहित ही है। उसको पहले से आशा थी कि आँखों के सामने उन्हें के स्वभाव को वह पहचानता था। उसकी फूलों के पथ पर उन कि जब तक वह इस भेद को—जो कि पीछे हर्षोन्मत्त भीड़ को राजा से भी छिपा हुआ था,—स्वयं खोल जिसके अन्दर उसकी त आयेगा। नवयुवक की अब एकमात्र आरकितनी दुस्सह मर्म का लेश मात्र भी हो सकता था, केवल राजकुमा ल उठी थी। स्योद्घाटन की सफलता पर निर्भर थी; और उसके उसके लि डालते ही उसने देख लिया कि उसको सफलता मिल गई, जैसा कि उसकी अन्तरात्मा पहले ही कहती थी कि वह सफल होकर रहेगी।

इस पर नवयुवक की तीक्ष्ण और आतुर दृष्टि ने प्रश्न किया—'कौन-सा ?' जहाँ वह खड़ा था वहाँ से चिल्लाकर मानो उसने इसे पूछा हो यह प्रश्न कुमारी के लिए इतना प्रत्यक्ष था। एक क्षण भी खोने के लिए नहीं था। पलक मारते में प्रश्न पूछा गया था, तुरन्त दूसरे ही क्षण इसका उत्तर दे देना था।

कुमारी का दाहिना हाथ सामने मुंडेल के गद्दे पर रक्खा था। उसने वह हाथ उठाकर बहुत द्रुतगति से एक हलका इशारा दाहिनी ओर को किया। उसके प्रेमी के अतिरिक्त इसे किसी ने नहीं देखा। एक उसके सिवा सब की आँखें अखाड़े में खड़े हुए मनुष्य पर केन्द्रित थीं। वह मुड़ा, और जमे हुए तेज़ क़दम रखता हुआ उस खुले हुए मैदान के दूसरी ओर पहुँच गया। प्रत्येक हृदय की धड़कन रुक गई, प्रत्येक ने साँस खींच ली; उस मनुष्य पर प्रत्येक की दृष्टि बिलकुल स्थिर होकर जम गई। बिना ज़रा भी हिचकिचाये वह दाहिने तरफवाले द्वार तक गया और उसे खोल दिया।

अस्तु, इस कहानी की समस्या अब तो थी कि किस कमरे में से चीता बाहर आया कि युवती ? हम ज्यों-ज्यों उस पर विचार करते हैं, उसका उत्तर देना उतना ही कठिन मालूम होता है, बल्कि हम मानव-हृदय की उन गहराइयों के अध्ययन में लग जाते हैं, जहाँ मनोभावों का अस्पष्ट द्विविधाजनक जंगल हमें ऐसा उलझा देता है कि फिर उसमें से निकलने के लिए रास्ता नहीं मिलता। इस प्रश्न पर यह समझकर विचार न कीजिए कि इसका निर्णय आप ही पर निर्भर है, निष्पक्ष पाठक से राजकुमारी मान-कर कि इसका उत्तर उस गर्म रक्तवाली अपने प्रेमी राजकुमारी पर निर्भर है जिसका हृदय ईर्ष्या और निराशा की दोहरी आग में ताव नहीं ला रहा। वह स्वयं तो उसको खो चुकी थी, लेकिन अब कौन उसको अपनाये ?

स्वप्न में और जाग्रतावस्था की घड़ियों में कितनी ही बार वह सहसा भय से चौंककर विक्षिप्त हो उठी थी, तथा विचारों में अपने प्रेमी को वह द्वार खोलते हुए चित्रित करके, जिसके पीछे चीते के निर्दयी नाखून उसकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे, उसने हाथों से अपना मुख ढाँप लिया था।

पर कितने ही और अधिक बार उसने उसे उस दूसरे दरवाजे पर देखा था ! और युवती का द्वार खोलने पर जब एकाएक हर्षोल्लास से उसे चकित हो जाते पाया था, तो किस प्रकार अपने दाँत पीसकर और अपने बाल नोचकर वह रह गई थी। और उसने जब देखा था कि उस आरक्त-कपोल-युक्त, उस विजय-लास से चमकती हुई आँखोंवाली बाला को भेंटने के लिए वह लपका; उसने जब देखा था कि अपने सङ्ग उसे बाहर लेकर वह आया, और उसका सारा शरीर नये जीवन का आनन्द प्राप्त कर खिल उठा; उसने जब उपस्थित जन-समूह की हर्ष-ध्वनि और जोर-जोर से बजते हुए घण्टों का झन-नाद

सुना था; उसने जब देखा था कि आनन्द-मण्डली को अपने पीछे लिये हुए पुरोहित उस जोड़े के पास पहुँचा और ऐन उसकी आँखों के सामने उन्हें वर-वधू बना दिया; और उसने जब फूलों के पथ पर उन्हें साथ-साथ जाते हुए देखा, और उनके पीछे हर्षोन्मत्त भीड़ को अदम्य उत्साह से नारे लगाते हुए, जिसके अन्दर उसकी एक अकेली चीख विलीन हो गई थी, तब कितनी दुस्सह मर्मवेदना की ज्वाला से पीड़ित होकर उसकी आत्मा जल उठी थी।

तब क्या उसके लिए यह अच्छा नहीं होगा कि वह इसी क्षण अपनी इहलीला समाप्त कर दे और भविष्य के अर्ध-असभ्य पुण्य-लोक में पहुँच कर राजकुमारी के लिए प्रतीक्षा करे ?

किन्तु फिर वह भयानक चीता, वे चीखें, वह रक्त-काण्ड !

अपना निश्चय एक क्षण में उसने जता दिया था, पर कई दिन और कई रातों के पीड़ामय चिन्तन के बाद यह निश्चय स्थिर हुआ था। वह जानती थी कि उससे पूछा जायगा, उसने यह निश्चित कर लिया था कि उसे कौन सा उत्तर देना होगा। अतः बिना लेश मात्र हिचक के उसने अपना हाथ दाहिनी ओर को हिला दिया था।

उसके निर्णय का प्रश्न कोई आसान समस्या नहीं; और इसका उत्तर मैं ही दे सकूँगा, मेरी तो ऐसी धारणा नहीं। अस्तु, मैं आप सबों के लिए इस प्रश्न को छोड़ता हूँ—खोले गये दरवाजे में से कौन बाहर आया—युवती, कि चीता ?

काला बिल्ला

मैं एक बहुत अद्भुत पर साथ ही एक बिलकुल घरेलू-सी
ानी लिखने जा रहा हूँ, यद्यपि मुझे आशा नहीं है कि कोई
पर विश्वास करेगा। मैं चाहता भी नहीं कि कोई करे।
.ब इसके बारे में मुझको स्वयं अपनी इन्द्रियों पर विश्वास नहीं
है तब यह तो पागलपन ही होगा कि मैं ऐसी आशा करूँ।
फिर भी पागल मैं नहीं हूँ और निश्चय ही मैं स्वप्न भी नहीं देख
रहा हूँ। कल तो जीवन का अन्त हो ही जायगा। अस्तु, आज
मैं अपना हृदय हलका कर लूँ। मेरा अभिप्राय इस समय यही
है कि मैं अपनी कुछ घरेलू घटनाओं को सीधे-सादे ढङ्ग से संक्षेप
में संसार के सामने रख दूँ, उन पर कोई टीका-टिप्पणी न करूँ।
इन घटनाओं से मुझे भय प्राप्त हुआ है, यातनाएँ मिली हैं, इनके
द्वारा मेरा सर्वनाश हुआ है। पर मैं इनकी व्याख्या करने का
प्रयास न करूँगा। मेरे लिए तो ये घटनाएँ भयोत्पादक रही
हैं; शायद बहुतों को ये वैचित्र्य-पूर्ण कथाओं से भी कम उग्र
अथवा उत्तेजक जान पड़ें। भविष्य में सम्भव है, कोई व्यक्ति
ऐसा मस्तिष्क लेकर आये जो मेरे विक्षिप्त भाव-स्वप्न को साधा-
रण घटनाओं के रूप में लोगों के सम्मुख रख सके—कोई ऐसा
मस्तिष्क जो अपनी उत्तेजना-रहित, शान्त तर्क-बुद्धि के द्वारा
इन घटनाओं को (जिन्हें भयाकुल और विस्मित होकर मैं आज
विस्तार दे रहा हूँ) दिखला सके कि ये कारण और क्रम का
एक स्वाभाविक रूप-मात्र है।

लोग मुझे बचपन से ही सीधा और दयालु प्रकृति का जानते
थे। मेरा हृदय इतना कोमल था कि मेरे सब साथी मेरा उप-

हास किया करते थे। विशेषकर पशुओं से मुझे बड़ा स्नेह था। मेरे पिता ने मेरे खेलने के लिए तरह-तरह के जानवर पाल लिये थे। मेरा बहुत-सा समय इन्हीं के साथ बीतता था। मुझको जितनी ख़ुशी इन्हें खिलाने और चुमकारने में होती थी, उतनी और किसी बात में नहीं होती थी। उम्र के साथ मेरा यह शौक़ भी बढ़ता गया, और युवा-अवस्था पहुँचने पर तो यह मेरे मनोरञ्जन का एक विशेष साधन ही बन गया। जिन लोगों को मनुष्यता के नाते कभी कोरी मित्रता या भ्रामक आत्मीयता का अनुभव हुआ है उनके हृदय को पशु का प्रेम और निःस्वार्थ आत्म-समर्पण एकदम वश में कर लेता है। उसमें कुछ बात ही ऐसी होती है।

मेरी शादी जल्दी ही हो गई थी। यह देखकर कि मेरी स्त्री का स्वभाव मुझसे भिन्न नहीं है, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसे जब मालूम हुआ कि मुझको जानवर पालने का शौक़ है तब शीघ्र ही अच्छे-अच्छे पशुओं से उसने घर भर दिया। चिड़ियाँ, सुनहरी मछलियाँ, एक बढ़िया-सा कुत्ता, कई खरगोश, एक छोटा-सा बन्दर और एक बिल्ला हमारे यहाँ पले हुए थे।

बिल्ला बहुत बड़े क़द का था और देखने में बहुत ख़ूबसूरत लगता था। एकदम काला था। इतना समझदार कि आश्चर्य होता था। मेरी स्त्री को जादू-टोने पर कम विश्वास नहीं था। बिल्ले की समझदारी को देखकर वह तो बहुधा कह दिया करती थी कि सुना नहीं! जादूगरनियाँ बिल्ली बनकर घरों में आ जाती हैं। यह बात नहीं थी कि वह गम्भीरता से इस पर विश्वास करती हो। योंही याद आ गई, इसलिए इस बात का ज़िक्र यहाँ कर दिया।

कालू से—कालू उस बिल्ले का नाम था—मुझे विशेष लगाव हो गया था। मैं अधिकतर उसी के साथ खेलता था। मैं ही

उसे खिलाता और घर में जहाँ-जहाँ मैं जाता, वह मेरे सङ्ग-सङ्ग रहता। बड़ी कठिनाई से मैं उसे सड़कों पर आने से रोक पाता था।

इस प्रकार हमारी मित्रता कई सालों तक रही। इस अर्से में असंयम के राक्षस ने (मुझे कितनी शर्म आती है यह कहते हुए!) मेरे स्वभाव और चरित्र को बिलकुल बदल दिया। दिन पर दिन मैं अधिक गुम-सुम-सा रहने लगा। ज़रा-ज़रा सी बात पर मुझे गुस्सा भी जल्दी आने लगा, और दूसरों के साथ कोई संवेदना मुझे नहीं रह गई। मैं अपनी स्त्री के साथ असंयत भाषा का व्यवहार करने लगा। यहाँ तक कि मैं उसे मार भी बैठता था। निःसन्देह मेरे परिवर्तित आचरण का प्रभाव मेरे पालतू जानवरों पर भी पड़ा। मैंने उनकी ख़बर लेनी ही नहीं बन्द कर दी, बल्कि उनके प्रति कठोर भी हो गया। ख़रगोश या बन्दर या कुत्ता भी अगर कहीं प्यार के मारे या योंही मेरे सामने आ पड़ता था तो उसकी शामत आ जाती थी। एक कालू के लिए तो इतना स्नेह अवश्य रह गया था कि मैं उसे मारता नहीं था। पर मेरी व्याधि बढ़ती ही गई। भला मदिरा-पान से बढ़कर और कौन-सा रोग होगा? कालू बूढ़ा होता जा रहा था, इस कारण अब उसका मिज़ाज भी कुछ तीखा हो गया था। लेकिन अब कालू पर भी मेरा हाथ पड़ने लगा।

एक रात जब मैं नशे में चूर होकर घर आया तब मुझे ऐसा लगा, मानो कालू मेरे पास नहीं आना चाहता। मैंने उसे पकड़ा तब उसने मार के डर से मेरे एक हाथ पर हलका-सा दाँत मार दिया। फिर क्या था! मुझ पर गुस्से का भूत सवार हो गया। मैं अपना आपा भूल गया। मेरी आत्मा मानो मेरी देह से निकल गई, और मेरी नस-नस में मदोन्मत्त क्रूरता

की पैशाचिक वृत्ति जाग उठी। मैंने वेस्कट की जेब से चाक़ू निकाला, उसे खोला और उस ग़रीब जानवर का गला हाथ से दबाकर उसकी एक आँख निकाल ली। अपने इस बीभत्स कार्य को लेखनी-बद्ध करते समय मैं आज शर्म और पश्चात्ताप की ज्वाला से काँप उठा हूँ।

जब अपने दुराचार को मैं नींद में डुबो चुका—और सुबह हुई, और मेरी सुबुद्धि लौटी तब अपने पाप के लिए मुझे भय और पश्चात्ताप होने लगा। किन्तु अधिक से अधिक यह एक अनिश्चित और कमजोर-सी भावना रह गई थी, जिसका आत्मा पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। मैं फिर 'अति' करने लगा, और मैंने वह पाप-कर्म शराब के प्यालों में भुला दिया।

इधर बिल्ला धीरे-धीरे स्वस्थ हो गया। उसकी निकाली हुई आँख का पोटा भयानक अवश्य लगता था, पर अब उसे कोई पीड़ा होती जान नहीं पड़ती थी। वह पहले की तरह घर में फिर घूमने लगा। लेकिन जैसी कि अब आशा की जा सकती थी, वह मेरे नजदीक पहुँचते ही अत्यन्त भयभीत होकर भागता था। मुझमें इतनी सहृदयता अब भी शेष रह गई थी कि उस अत्यधिक प्यार करनेवाले पशु का अपने प्रति विराग देखकर मुझे दुःख होने लगता था। पर कुछ ही दिनों के बाद इस भावना के स्थान पर मुझे झुँझलाहट-सी होने लगी। इसके बाद तो मेरी मति ऐसी बदली कि इस पतन से मेरा निस्तार असम्भव हो गया। शास्त्रों में कहीं इस कुमति का जिक्र नहीं है। जितना मुझे आत्मा के अमर होने पर भी नहीं, उससे अधिक विश्वास मुझे इस सत्य पर हो गया है कि यह कुमति मानव-हृदय की आदिम प्रवृत्तियों, उसके उन अभेद्य मूल भाव-संस्कारों में से एक है जो मनुष्य के चरित्र-निर्माण में प्रेरक होती है। कौन है जिसने सैकड़ों बार निषिद्ध कर्म नहीं किये हैं, और

केवल इसी लिए किसी और कारण से नहीं, क्योंकि घृणित अथवा मूर्खता-पूर्ण कार्य करना सर्वदा मना किया गया है ? हमारी बुद्धि हजार कहे कि 'नहीं', फिर भी चूँकि एक बात क़ानून है, केवल इसी लिए क्या उसे तोड़ने की प्रवृत्ति बार-बार हमारे मन में नहीं उठती ? जैसा कि मैंने अभी कहा है, यह प्रतिकूल बुद्धि मेरे अन्तिम पतन के लिए मेरे अन्दर पैदा हुई। अपनी आत्मा को पीड़ित करने, उसे कुण्ठित करने की अदम्य भावना से,—पाप-कर्म को पाप-कर्म जानकर ही उसे करने की अपनी इच्छामात्र से—मैं आख़िरकार मजबूर हो गया कि उस सीधे-से जानवर को जो यातना मैंने पहुँचाई है उसे और बढ़ाऊँ, और बढ़ाऊँ और चरम-सीमा तक उसको पहुँचा दूँ ! अस्तु, एक दिन प्रात:काल बड़ी निर्दयता के साथ मैंने उसके गले में फन्दा डाला और पेड़ की एक शाखा में उसे लटका दिया। मेरे आँसू निकल रहे थे, और मेरा हृदय पश्चात्ताप से फटा जाता था, पर उसे मैंने फाँसी दे दी—फाँसी दे दी। क्योंकि उसने मुझे प्यार किया था, और स्वयं कभी मुझे अप्रसन्न नहीं किया था; क्योंकि मैं जानता था कि जो मैं कर रहा हूँ वह पाप है—ऐसा पाप है जिससे महाक्रुद्ध और अत्यन्त करुणा-मय भगवान् की अनन्त करुणा भी मेरी अमर आत्मा को उबार नहीं सकती।

जिस दिन यह कुत्सित कर्म किया गया था, उस रात को 'आग ! आग !' का शोर सुनकर मेरी आँख खुल गई। मेरे पलँग के पर्दों से लपटें उठ रही थीं। सारा घर जल रहा था। मैं, मेरी स्त्री और मेरा एक नौकर बड़ी मुश्किल से आग से जान बचाकर निकले। सब कुछ स्वाहा हो गया। सब धन-दौलत राख में मिल गई। इसके बाद से बस, निराशा ने मुझे घेर लिया।

मैं इतना अन्धविश्वासी नहीं कि अपने कुकृत्य तथा इस गृह-दाह में कारण और कार्य का सम्बन्ध ढूँढ़ निकालूँ, मैं केवल घटनाओं का एक सिलसिला पेश कर रहा हूँ। मैं यह नहीं चाहता कि इस सिलसिले की कोई कड़ी अधूरी रह जाय।

अगले दिन मैं अपने खँडहर की तरफ़ गया। बस, एक दीवार शेष थी, बाक़ी सब गिर गई थीं। यह घर के बीचो-बीचवाली दीवार थी, इससे कमरा दो भागों में पृथक् होता था। इसी के बराबर मेरे पलँग का सिरहाना था। बहुत कुछ इसके प्लास्टर की वजह से भी आग इस पर ज़्यादा असर नहीं कर सकी थी। मेरे ख़याल में इसकी वजह यह थी कि प्लास्टर हाल में ही लगाया गया था। एक भीड़-सी इस दीवार के चारों ओर जमा थी और बड़े ध्यान और तत्परता से इसके एक भाग का निरीक्षण कर रही थी। 'आश्चर्य!' 'अद्भुत!' और इसी प्रकार के अन्य शब्दों को सुनकर मेरी भी उत्सुकता बढ़ी। मैं वहाँ गया और देखा कि उस सफ़ेद भीत पर एक बड़ी-सी बिल्ली का उभरा हुआ चित्र बना हुआ है। निशान इतना सही बना हुआ था कि वास्तव में अचम्भा होता था। गले में एक रस्सी का भी निशान था।

जब मैंने पहले-पहल इस प्रेत-चित्र को देखा—उस समय इसको कुछ और समझना मेरे लिए असम्भव था—तब मेरे भय और आश्चर्य का कुछ ठिकाना नहीं रहा। आख़िरकार मन में विचार उठने लगे। मुझे स्मरण हुआ कि घर से मिले हुए बाग़ में ही मैंने बिल्ले को फाँसी दी थी; फिर 'आग! आग!' सुनते ही लोगों की भीड़ इस बाग़ में भर गई थी। ज़रूर उनमें से किसी ने पेड़ से उस जानवर की रस्सी को काटकर खुली हुई खिड़की में से अन्दर फेंक दिया होगा। शायद मुझे जगाने के लिए ही किसी ने ऐसा किया होगा। अन्य दीवारें गिरती रहीं,

जिन्होंने मेरे सताये हुए पशु को ताज़ा लगे हुए प्लास्टर में दबा दिया। अस्तु, आग की लपटों ने मृत-शरीर से निकले हुए अमोनिया और प्लास्टर के चूने के द्वारा यह चिह्न अङ्कित कर दिया।

मैंने अपनी तर्क-बुद्धि को इस प्रकार समझाकर शान्त कर लिया था कि उपर्युक्त विस्मयकारी घटना का यही कारण है, (हालाँकि मन को इससे पूर्ण सन्तोष नहीं होता था) तथापि मेरी भावना पर इसका कुछ कम गहरा प्रभाव नहीं पड़ा। महीनों तक मैं अपने आपको उस बिल्ले की छाया से मुक्त नहीं कर सका, और इस अर्से में कुछ पश्चात्ताप की-सी भावना भी मेरे मानस में लौटी किन्तु यह पश्चात्ताप ऊपरी था, वास्तविक नहीं। हाँ, इतना हुआ कि मुझे अपने कालू के खोने का दुःख महसूस होने लगा, और जिन कुत्सित स्थानों में मैं इन दिनों साधारणतया उठता-बैठता था, वहाँ पूछ-ताछ करने लगा कि उसी जाति का कोई दूसरा बिल्ला लगभग उसी जैसा अगर मिल जाय तो मैं पाल लूँ।

एक निन्द्य से भी निन्द्य मकान की बैठक में एक रात को जब मैं कुछ बेखबर-सा बैठा था तब अचानक मेरा ध्यान एक काली-सी वस्तु की ओर आकृष्ट हुआ जो 'रम' या 'जिन' नाम की शराब के एक भारी बक्स के ऊपर रक्खी हुई थी। उस कमरे में सबसे बड़ा 'फ़र्नीचर' यही बक्स था। कई मिनट से मैं उस बक्स के ऊपरी सिरे को देख रहा था। मुझे आश्चर्य इस बात का था कि मैंने उस पर रक्खी हुई वस्तु को इससे पूर्व क्यों नहीं देखा। मैं उस वस्तु के पास गया और हाथ बढ़ाकर उसको छुआ। वह था एक काला बिल्ला, बिलकुल उतना ही बड़ा जितना कालू था, और बिलकुल उसी जैसा। सिर्फ़ एक अन्तर था। कालू की देह पर कहीं एक भी सफ़ेद

बाल नहीं था, लेकिन इस बिल्ले की छाती पर एक बड़ा और सफ़ेद, बहुत स्पष्ट सा, चकत्ता सामने की ओर से दिखाई देता था।

जैसे ही मैंने उसको छुआ, वह एकदम खड़ा हो गया और ऊँचे स्वर में घर-घर करता हुआ मेरे हाथ पर अपने शरीर को मलने लगा। मेरा परिचय प्राप्त करके वह बहुत ख़ुश जान पड़ा। बिलकुल ऐसे ही बिल्ले की तो मुझको तलाश थी। मैं उसी वक़्त मकान-मालिक से उसे मोल ले लेने को तैयार हो गया। लेकिन उन्होंने कहा कि यह हमारा नहीं है, इसके बारे में हम कुछ नहीं जानते, हमने इसको पहले कभी नहीं देखा।

मैं उसको पुचकारता रहा और जब घर चलने को हुआ तब उसने ऐसा भाव दिखलाया, मानो वह भी मेरे साथ आना चाहता है। अस्तु, मैंने उसे अपने साथ आने दिया। रास्ते में कभी-कभी चलते-चलते झुककर मैं उसे थपथपा देता था। घर पहुँचते ही वह सब से हिल-मिल गया और मेरी पत्नी का तो बड़ा दुलारा हो गया।

पर मुझको तो थोड़े ही दिनों के बाद उससे कुछ अरुचि-सी होने लगी। जैसा मैंने विचार किया था, ठीक उसका उलटा निकला। मेरे प्रति उसका जो स्नेह-भाव था (और वह स्पष्ट था) उससे न जाने क्यों मैं उकताने लगा, मुझे उससे चिढ़ होने लगी। धीरे-धीरे यही भाव पूरी तरह से घृणा में बदल गया। उससे मैं अलग सा रहने लगा। अपने पिछले ज़ुल्म की याद करके कुछ लज्जा के कारण उस पर शारीरिक आघात करने से मैं रुक जाता था। कई सप्ताह तक मैंने उसे बिलकुल नहीं मारा और न कोई क्रूर व्यवहार ही उसके साथ किया। लेकिन आख़िरकार धीरे-धीरे मेरे मन में उसके प्रति एक अकथनीय घृणा का भाव भर गया। उसका रहना ही मुझे असह्य हो गया

था। उससे तो मैं यही चाहता था कि जैसे लोग छूत की बीमारी से भागते हैं, चुपचाप कहीं भाग जाऊँ।

उस बिल्ले के प्रति मेरी कटुता निःसन्देह इस कारण और भी बढ़ गई थी कि जिस दिन मैं उसे घर लाया था उसकी अगली सुबह को मैंने देखा कि कालू की तरह उसकी भी एक आँख ग़ायब है। इस परिस्थिति में मेरी पत्नी के निकट तो वह और भी दुलारा हो गया। जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ, मेरी स्त्री के हृदय में सहानुभूति और समवेदना की एक उदार भावना थी। कभी पहले मेरा स्वभाव भी ऐसा ही था। तब मेरे आनन्द का भी एक सरस विशुद्ध रूप था।

जितना ही मैं उस बिल्ले से उकता गया था, जान पड़ता है उतना ही उसका लगाव मुझसे अधिक हो गया था। यानी वह जान-जानकर मेरे पीछे-पीछे आता था। पाठकों के लिए इस बात की कल्पना करना कठिन है। जहाँ कहीं मैं बैठता, वह मेरी कुर्सी के नीचे आकर बैठ जाता या मेरे घुटनों पर उछल आता और अपने असह्य गर्हित प्यार से मेरी गोद को भर देता। अगर मैं उठकर चलने को होता तो वह मेरे पैरों में आ जाता और क़रीब-क़रीब मुझे लड़खड़ा देता, या फिर अपने पञ्जों को मेरे वस्त्र में गड़ाकर मेरे ऊपर—मेरी छाती पर ही चढ़ आता। ऐसे अवसरों पर यद्यपि जी में यही आता था कि बस एक हाथ में इसका अन्त कर दूँ, पर एक तो अपने पिछले पाप-कर्म की मुझे याद आ जाती थी, दूसरे विशेष कारण यह था—मुझे अब शीघ्र स्वीकार ही कर लेना चाहिए कि—मुझे उस पशु से भय लगता था!

यह कुछ शारीरिक आघात के भय सा तो एकदम नहीं था, पर इसको शारीरिक न कहूँ तो मैं और कहूँ ही क्या? बड़े शर्म की बात है—हाँ, घोर पातकियों के इस कारागार में भी यह

सोचकर आज मैं शर्मिन्दा हो रहा हूँ कि उस पशु से भयभीत होने का कारण एक काल्पनिक भ्रम था, सो भी अत्यन्त साधारण। मेरी स्त्री ने एक से अधिक बार उस बिल्ले के सफ़ेद बालों की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया था। प्रकट रूप से यही एक अन्तर इस अजीब बिल्ले और मेरे पहले के बिल्ले में था, जिसका मैंने अन्त कर दिया था। पाठकों को स्मरण होगा, यह निशान यद्यपि बड़ा था, पर आरम्भ में बहुत स्पष्ट था, लेकिन धीरे-धीरे—इतने धीरे-धीरे कि बहुत दिनों तक तो मेरी तर्क-बुद्धि इस बात को केवल अपने भ्रम का ही एक रूप समझती रही—इस निशान ने एक साफ़ अस्पष्ट रेखा का आकार ग्रहण कर लिया। यह आकार उस चीज का था जिसका नाम लेते हुए मैं काँप उठता हूँ—विशेषकर तो इसी कारण वह बिल्ला मेरे लिए अस्पृश्य हो गया था, भयावह बन गया था; और अगर मुझे साहस होता तो केवल इसी कारण मैं उससे छुटकारा पा लेता; यह आकार एक डरावनी और घृणास्पद चीज का यानी फाँसी का था! ओह! कितने बीभत्स पाप-कर्मों का, कितनी दारुण यातनाओं का और मृत्यु का यह अस्त्र है!

अब तो सचमुच मानव-मात्र की करुण दशा से भी अधिक दयनीय अवस्था मेरी हो गई थी। एक पशु, एक जानवर के कारण—जिसके एक भाई का मैं घृणा और उपेक्षा के साथ खात्मा कर चुका था—केवल एक पशु के कारण मुझको, मुझ मानव को—जो परम-पिता परमात्मा का ही प्रतिरूप-सा निर्मित हुआ है—इतनी दुःसह यातना भोगनी पड़े! हाय, अब मुझे न दिन को शान्ति मिलती थी और न रात को। दिन में वह जानवर एक घड़ी को भी मुझे अकेला नहीं रहने देता था, और रात [illegible] कथनीय भयानक स्वप्नों से डरकर मैं चौंक उठता था! जा[illegible]। [illegible] था कि उस भूत की गर्म-गर्म साँस मेरे मुख

पर आ रही है। उसका बोझ हमेशा के लिए मेरी छाती पर लदा रहता था। यह एक ऐसा दुःस्वप्न था जिसको हटाने की शक्ति मुझमें नहीं थी।

मुझमें जो कुछ थोड़ी-बहुत अच्छाई शेष रह गई थी वह इन यातनाओं के भार से सब दब गई, कुचली गई। एकमात्र कुत्सित विचार ही—घोर तामसिक और कुत्सित विचार ही—मेरे अन्तरङ्ग हो गये। मेरे स्वभाव की विषण्णता यहाँ तक बढ़ गई कि मुझे सब वस्तुओं से और समस्त मानव-समाज से घृणा हो गई। अब मुझे अक्सर अनियन्त्रित क्रोध का दौरा अचानक उठ पड़ता, जो मुझे अन्धा कर देता। इसका प्रकोप, दुःख है कि बहुधा मेरी स्त्री पर ही होता था; जिसे वह अबाध रूप से धैर्य्य के साथ सहन करती रहती।

एक दिन किसी काम से वह मेरे साथ पुराने घर के तहखाने में उतरी। (ग़रीबी ने हमें अपने पुराने घर में रहने के लिए मजबूर कर दिया था) मेरे पीछे-पीछे बिल्ला भी आया। सीढ़ियाँ बहुत नीची थीं और मैं सिर के बल गिरा होता। अस्तु, क्रोध से मैं पागल हो उठा। अपना वह सब कमजोर डर भूल गया, जिसने अब तक मेरा हाथ रोक रक्खा था। मैंने एक कुल्हाड़ी उठा ली और उस जानवर पर उसका वार किया। अगर उसके कहीं पड़ जाती जैसा कि मैंने अन्दाज़ किया था तो उसका वहीं खात्मा था। किन्तु मेरी स्त्री ने हाथ से बीच में ही रोक लिया। इस विरोध से मेरे क्रोध का और भी विकट पैशाचिक रूप हो गया और स्त्री के पञ्जे से अपना हाथ छुड़ाकर मैंने वह कुल्हाड़ी उसी के सिर में मार दी। वह वहीं उसी क्षण निष्प्राण होकर गिर पड़ी। उसके मुख से एक आह भी नहीं निकल सकी।

इस नृशंसतापूर्ण हत्या के बाद मैं फ़ौरन ही पूर्ण धैर्य्य के साथ शव को छिपाने का उपक्रम करने लगा। यह मैं जानता था

कि पड़ोसियों से निगाह बचाकर मैं लाश को घर से दूर नहीं कर सकता था, न दिन को, न रात को। कई तरकीबें मेरे दिमाग़ में आईं। एक बार तो मैंने सोचा कि उसके बारीक बारीक टुकड़े करके आग में जला दूँ। फिर सोचा कि तह-खाने के फ़र्श के नीचे ही इसको गाड़ दूँ। फिर सोचा कि क्यों न आँगनवाले कुएँ में इसे डाल दूँ। यह भी सोचा कि बिसाती के माल की तरह एक बक्स में पैक करके उपयुक्त प्रबन्ध के साथ किसी कुली के सिर पर रखवाकर मकान से कहीं बाहर भेज दूँ। अन्त में इन सबसे उत्तम उपाय मैंने यह सोचा कि शव को तहख़ाने की दीवार में ही चुन दूँ, जैसा कि मध्य-युग के पादरियों के बारे में लिखा मिलता है कि वे अपने शिकार को दीवार में चुनवा देते थे।

ऐसे कार्य के लिए वह तहख़ाना उपयुक्त भी था। उसकी दीवारें बहुत मजबूत नहीं बनाई गई थीं और हाल में ही सबों पर प्लास्टर किया गया था, जो उस स्थान की कमी के कारण अभी तक स.ख्त भी नहीं हो सका था। इसके अतिरिक्त दीवार का कुछ भाग एक ओर निकला हुआ था, जो कभी किसी समय कृत्रिम धूएँदानी या चूल्हे के रूप में बना था, लेकिन अब प्लास्टर से बन्द कर दिया गया था, ताकि वह भी तहख़ाने के शेष भाग के समान ही दिखाई दे। इस स्थान की ईंटें निका-लना और उसमें शव को रखकर उसे फिर पहले की तरह इस प्रकार बराबर कर देना कि कहीं कुछ न जान पड़े, यह सब मैं कर सकता था, इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं था।

मेरे अन्दाज़ ने मुझे धोखा भी नहीं दिया। एक लोहे की सलाख से मैंने उस स्थान की ईंटें वहाँ से निकाल लीं, और मृत शरीर को अन्दर की दीवार के सहारे होशियारी से टेक दिया। उसको वहीं सँभाले रखकर मैंने बिना किसी दि.क्क़त

के दीवार की ईंटें पूर्ववत् जोड़कर रख दीं। फिर बड़े एहति-यात से मैंने गारा, रेत और काच-सिवार इकट्ठा किया और उनका प्लास्टर बनाया, जिसको पहलेवाले प्लास्टर से पह-चानना मुश्किल था। फिर उसको नई ईंटबन्दी के ऊपर फैलाकर लगा दिया। जब सब काम खतम हो गया तब मैंने ज़रा सन्तोष की साँस ली। सब बिलकुल ठीक था। दीवार के देखने से यह नहीं मालूम होता था कि उसमें कहीं दोबारा काम किया गया है। मैंने फ़र्श का सब कूड़ा-करकट बड़ी होशियारी से बीनकर अलग कर दिया और विजय के भाव से चारों ओर देखकर कहा कि आखिरकार, इतनी मेहनत व्यर्थ नहीं गई।

मेरा दूसरा काम था अब उसको ढूँढना जिसके कारण मुझ पर इतनी कमबख्ती आ गई थी। मैंने निश्चय कर लिया कि उसको मारकर ही छोड़ूँगा। उस क्षण अगर वह मेरे हाथ पड़ जाता तो उसका अन्त निश्चय था। मालूम होता है कि वह चालाक जानवर मेरे पिछले कोप को देखकर भयभीत हो गया था, और मेरे मन की प्रस्तुत अवस्था में मेरे सामने आते हुए डरता था। उस अस्पृश्य जन्तु के भाग जाने से मेरे हृदय को कितनी शान्ति मिली, उसे बताना अथवा उसकी कल्पना करना बहुत असम्भव है। रात में भी वह नहीं आया। दूसरा और तीसरा दिन भी व्यतीत हो गया, पर मेरी आत्मा को जलानेवाला वह बिल्ला नहीं आया। अब मानो फिर से मैंने मनुष्य का नया जन्म पाया, क्योंकि मेरे आततायी ने भय से घबराकर सदैव के लिए मेरा घर छोड़ दिया था। अब मुझे कभी उसकी सूरत देखनी नहीं पड़ेगी, इस बात से मुझे अपार प्रसन्नता थी। हत्या का घोर पातक मुझे बहुत अधिक बेचैन नहीं कर रहा था। दो-एक बार सरकारी पूछ-ताछ की गई थी, लेकिन उनका शीघ्र

ही समुचित उत्तर दे दिया था। अपना भविष्य मुझे कुछ सुखमय और कण्टक-रहित दिखाई देने लगा।

हत्या के चौथे दिन पुलिस की एक टोली बिलकुल अकस्मात् घर में घुस आई और मकान की तलाशी सख़्ती से लेने लगी। पुलिस के अफ़सरों ने तलाशी के वक़्त मुझे अपने साथ-साथ रहने का आदेश दिया। कोई कोना या ताक़ उन्होंने बाक़ी नहीं छोड़ा। आख़िरकार तीसरी या चौथी बार वे उस तहख़ाने में उतरे। मैं बिलकुल निश्चिन्त रहा। मेरे हृदय की धड़कन शान्त रही, जैसे निद्रा में निर्दोष व्यक्तियों की रहती है। मैं तहख़ाने में इधर से उधर टहलता रहा। पुलिसवालों को बिलकुल इतमीनान हो गया कि मैं निरपराध हूँ और वे चलने के लिए तैयार हुए। मेरी आन्तरिक प्रसन्नता इतनी अधिक थी कि छिपाये नहीं छिपती थी।

आख़िरकार जब वे सीढ़ियों पर आधी दूर चढ़ चुके थे, मैंने कहा "मुझे प्रसन्नता है कि आपका संशय मैं दूर कर सका हूँ। महाशयो! मैं आप लोगों के स्वास्थ्य और तरक़्क़ी की कामना करता हूँ। साहबो, हाँ इतना और कहता हूँ कि यह मकान बड़ा मज़बूत बना हुआ है।" सहज निश्चिन्तता से कुछ बात करने की धुन में मैं यह नहीं समझा कि मैं क्या कह रहा हूँ। "हाँ, मैं कह सकता हूँ कि इस मकान की—महाशयो, क्या आप जा रहे हैं?—ये दीवारें बिलकुल ठोस चुनी गई हैं!" यह कहकर एक शान-सी दिखाने के लिए मैंने अपने हाथ के बेंत से दीवार के ठीक उसी भाग को ज़ोर से ठोंका, जिसके पीछे मेरी स्त्री का शव था।

ओह! शैतान के पञ्जे से ईश्वर बचाये। जैसे ही मेरी छड़ी की स्वाभाविक गूँज शान्त हुई, उस क़ब्र में से प्रत्युत्तर में एक आवाज़ निकली!—रोने की-सी। पहले तो किसी बच्चे के

हिचक-हिचककर रोने की, टूटी हुई, ऊपर से मुँदी हुई-सी आवाज; फिर वह लम्बी होकर ऊँचे स्वर में बढ़ती गई, और एक चीख-सी बन गई, बिलकुल अप्राकृतिक और अमानुषिक-सी—किसी जानवर के जोर से रोने की-सी आवाज बन गई। उसमें दारुण भय और विजय की भावना का एक ऐसा मिश्रण था, जैसे नरक में पीड़ित आत्माओं के आर्द्र स्वर अपने अधःपतन में ही गर्वित दानवों के......स्वरों के साथ मिलकर ऊँचे उठते हैं।

उस समय मेरे विचार क्या थे, यह बताना तो मूर्खता है। मेरा सिर चक्कर खा गया और लड़खड़ाकर मैं सामनेवाली दीवार पर गिर पड़ा। एक क्षण के लिए तो सीढ़ियों पर पुलिसवाले भय और आश्चर्य में आकर सन्न खड़े रह गये। दूसरे ही क्षण एक दर्जन हाथ दीवार को खोदने के लिए बढ़े। भाग-विशेष एक साथ ढह पड़ा। मेरी स्त्री का शव, जो अब तक काफ़ी ख़राब हो चला था, (यद्यपि जमा हुआ रक्त उस पर इधर-उधर लिथड़ा हुआ था) आगन्तुकों के सामने खड़ा था। शव के सिर पर लाल मुँह खोले अपने एक प्रज्वलित नेत्र से घूरता हुआ वह घृणित जन्तु बैठा हुआ था, जिसकी चपलता और कुटिलता के कारण मेरे हाथ से हत्या हुई थी और जिसकी स्वर-सूचना ने मुझे फाँसी-घर के सिपुर्द कर दिया। उस विकराल जन्तु को मैंने शव के साथ ही दीवार में बन्द कर दिया था।

डाक्टर हिडेगर का प्रयोग [२]

वयोवृद्ध डाक्टर हिडेगर बड़े विचित्र आदमी थे। एक दिन अपने चार सम्मान्य मित्रों को अपनी 'स्टडी' में उन्होंने आमन्त्रित किया। इनमें तीन बुज़ुर्गों की दाढ़ी बिलकुल सफ़ेद थी। ये सज्जन थे मि० मेडबोर्न, कर्नल किलिग्रू, और मि० गैस्क्वाइन। चौथी एक बहुत बूढ़ी विधवा महिला थीं, जो 'बेवा साहबा वाइचरली' के नाम से प्रसिद्ध थीं।

सभी बेचारे बूढ़े और दुखी थे। जीवन में दुर्भाग्य ने ही इनका साथ दिया था। और इनका सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह था कि ये अभी तक जिन्दा थे—इन्हें तो क़ब्र में पहुँच जाना चाहिए था। मि० मेडबोर्न अपनी शक्तिपूर्ण अवस्था में एक बड़े समृद्ध व्योपारी थे, लेकिन सट्टे में नासमझी से सब उड़ा दिया; और अब उनकी स्थिति एक पथ के भिखारी से अधिक कुछ नहीं रह गई थी। कर्नल किलिग्रू साहब अपने जीवन का उत्तम भाग और साथ ही अपना स्वास्थ्य और ःन, गुनाहकारी और ऐयाशियों में खो चुके थे, जिसके फल-स्वरूप अब कई प्रकार की पीड़ाएँ (जैसे, गठिया) और शरीर तथा आ
भोग भोग रहे थे। मि० गैस्काइन राजनीति में तबा
नाम कलङ्कित कर चुके थे, मगर मौजूदा पीढ़ी में
विस्मृत कर दिया था, यानी बदनामी से नि
में डाल दिया था। और बेवा साहबा वाइ
प्रसिद्ध है कि ये रूप और सौन्दर्य में अप
चढ़कर थीं। किन्तु कुछ ख़राब अफ़

कारण सभ्य-समाज इन पर सन्देह करने लगा था, अस्तु, दीर्घ काल से ये बिलकुल एकान्त-वास कर रही थीं।

यहाँ यह बता देना उचित ही है कि एक समय था, जब ये तीनों वयोवृद्ध महाशय यानी मि० मेडबोर्न, कर्नल किलिग्रू और मि० गैस्काइन, बेवा-साहबा वाइचरली के प्रेमी थे। बल्कि रक़ाबत में यहाँ तक नौबत पहुँची थी, कि एक दूसरे का गला काटने पर उतारू हो गये थे। कुछ और आगे कहने से पूर्व, इतना और भी सङ्केत कर दूँ कि डा० हिडेगर और ये सब सज्जन अक्सर झुँझलाते और झल्लाते रहे हैं। अपने पिछले दुःखों की याद करके, और प्रस्तुत कठिनाइयों से परेशान होकर, बूढ़ों के लिए ऐसा करना स्वाभाविक ही है।

डा० हिडेगर ने सबको बैठने का आदेश करते हुए कहा—"मेरे पुराने अज़ीज़ दोस्तो, मैं इस 'स्टडी' में बैठा हुआ छोटे-मोटे प्रयोगों द्वारा अपना जी बहलाया करता हूँ। उन्हीं में से एक के सम्बन्ध में आपकी सहायता का इच्छुक हूँ।"

डा० हिडेगर के बारे में जो कुछ मशहूर था, अगर वह सब सही है, तो अवश्य ही उनका 'स्टडी' एक बड़ा विचित्र स्थान रहा होगा। यह एक पुराने ढङ्ग का अँधेरा-सा कमरा था। चारों ओर जाले इधर से उधर लटके हुए थे, जिन पर न जाने कब से गर्द पड़ी हुई थी। दीवारों से लगी हुई किताबों की कई [illegible] आल्मारियाँ थीं, जो सब खुली थीं। इनके नीचे [illegible] त बड़ी और दरमियानी साइज़ की भारी-भारी [illegible]ें, जिनके नाम पुराने अक्षरों में उनके पीछे लिखे [illegible] ानों में छोटी पाकेट-साइज़ की पुस्तकें थीं, [illegible] लिपटी थीं। मध्यस्थित आल्मारी के [illegible] ज़ की काँसे की एक मूर्ति (बस्ट) रक्खी [illegible] के अनुसार डा० हिडेगर अपने सब

कठिन रोगों में इसी मूर्ति से परामर्श लेते थे। कमरे के सबसे अँधेरे कोने में एक कम चौड़ा लेकिन कुछ ऊँचा सा मजबूत ओक-लकड़ी का सन्दूक़चा था जो ज़रा सा खुला हुआ था। इसके अन्दर, ऐसा भ्रम होता था, मानो किसी मनुष्य की खोपड़ी रक्खी है। किताबों की दो आल्मारियों के बीच में मुँह देखने का एक आइना टँगा हुआ था, ख़ासा बड़ा, मगर गर्द से भरा हुआ; इसके सुनहरे फ्रेम पर धब्बे पड़ गये थे।

इस दर्पण के विषय में जो बड़ी-बड़ी विचित्र कहानियाँ प्रचलित थीं, उनमें यह भी मशहूर था कि इसके अन्दर डाक्टर साहब के सब मृत रोगियों की आत्माएँ रहती थीं; और जब कभी डाक्टर साहब उस ओर निगाह डालते थे, वह उसमें से उनकी तरफ़ घूरने लगती थीं। बैठक के दूसरे भाग की सजावट के लिए एक युवती का पूरे क़द का चित्र लगा हुआ था, लेकिन रेशम, साटन और लेस की पोशाक का भड़कीलापन अब धुँधला चला था; चेहरा भी अब साफ़ नजर नहीं आता था। एक अर्ध-शताब्दी से अधिक पूर्व डा० हेडेगर की इस युवती से जब शादी होने ही वाली थी, तो कुछ तबीयत ख़राब होने पर उसने अपने प्रेमी का एक नुस्ख़ा पी लिया था, और ऐन विवाह की शाम को संसार से बिदा हो गई थी।

अभी इस कमरे की विचित्रतम वस्तु के बारे में कहना बाक़ी है। यह एक काले चमड़े की भारी जिल्दवाली मोटी सी किताब थी। इसे हिफ़ाज़त से बन्द करने के लिए इसमें बड़े-बड़े चाँदी के क़ब्जे लगे हुए थे। जिल्द के पीछे कुछ नहीं लिखा हुआ था। अस्तु, किताब का नाम कोई नहीं बता सकता था। पर इतना सब जानते थे कि यह कोई जादू की किताब है। एक बार घर की नौकरानी ने केवल गर्द झाड़ने के इरादे से इसे ज़रा उठाया ही था कि सन्दूक़चे में खोपड़ी खड़खड़ा उठी थी, युवती

का चित्र एक क़दम आगे खिसक पड़ा था, दर्पण में से कई मुर्दा-शक्लें झाँकने लगी थीं, और हकीम हिपोक्रेटीज़ की मूर्ति त्योरी चढ़ाकर बोल उठी थी—"हैं!"

ऐसी थी डाक्टर हेडेगर साहब की बैठक। जिस दिन हमारी कथा शुरू होती है, गर्मी की दोपहर ढल चुकी थी। कमरे के बीचोबीच एक गोल मेज़—आबनूस की तरह काली—रक्खी थी, जिस पर बहुत कारीगरी का, बड़ा ख़ूबसूरत, एक शीशे का फूलदान रक्खा था। खिड़की से होकर, दो गुलाबी से भारी परदों की तहों के बीच से धूप आ रही थी, जो ठीक इस फूलदान के ऊपर बिखर गई थी। इसकी चमक की क्षीण आभा उन पाँच वयोवृद्ध सज्जनों के सूखे हुए चेहरों पर भी पड़ रही थी, जो मेज़ के चारों ओर बैठे थे। मेज़ पर चार गिलास 'शैम्पेन' के भी रक्खे थे।

डाक्टर हेडेगर ने फिर पूछा—"मेरे पुराने अज़ीज़ दोस्तो, क्या मैं आप लोगों की सहायता पर इत्मीनान कर सकता हूँ?"

जेंक्स साहब की मूँछें

मैकन शहर में एक बड़े तबीयतदार व्यक्ति रहते थे, जिनका नाम हम कहानी में जेंक्स रखे देते हैं। अपनी शक्ल-सूरत पर उन्हें काफी नाज़ था। उनकी उँगलियाँ अँगूठियों से लदी रहती थीं और उनकी क़मीज़ का सामना बड़े आला क़िस्म के ब्रेस्ट-पिन से चमकता रहता था। कोट, हैट, वेस्टकोट और बूट सब मौज़ूँ थे। वे अत्यन्त सफ़ेद और मुलायम क़िस्म के दस्ताने पहनते थे। बालों में तेल इत्यादि और उनका सँवारना सब बिलकुल आधुनिक ढङ्ग का होता था। और इस पर हज़रत की बेहद लम्बी मूँछों का ताव—बस, जान लेने के लिए काफ़ी था। जिस तरह बड़ी होने पर बिल्ली को जब मालूम होता है कि यह मेरी पूँछ है तब वह उस पर मान करती है, उसी तरह आपको अपनी मूँछों पर बड़ा घमण्ड था।

मैं एक दिन एक दलाल के आफ़िस में बैठा था कि जेंक्स साहब आये और पूछने लगे—"न्यू यार्क में विनिमय का दर क्या है?" उनसे कहा गया कि 'तशरीफ़ रखिए।' और एक सिगार उन्हें दिया गया। स्टॉक के खरीद-फ़रोख्त पर बात चली। एक साहब वहाँ पहले से मौजूद थे। वे बोले—"मेरी राय में किसी शख्स को फ़लाँ बैङ्क में अपने स्टॉक नहीं बेचने चाहिए, क्योंकि कुछ ही दिनों में वहाँ का भाव और अच्छा जायगा।

जेंक्स ने उत्तर दिया—"अगर मैं कुछ भी नफ़ा उठा सकूँ तो मैं तो जो कुछ भी मेरे पास है बेच दूँगा!"

"नहीं, साहब!" इस पर एक ने कहा—"जो कुछ भी, कैसे ? अपनी मूँछें तो आप बेचेंगे नहीं।"

इस बात पर बड़ा क़हक़हा लगा। जेंक्स ने फ़ौरन जवाब दिया—"मैं तो बेच दूँगा; पर उनकी आवश्यकता है किसे ? ख़रीद करनेवाला इन्हें ख़रीदकर अपना रुपया ही खोयेगा। मैं तो यही समझता हूँ!"

"ख़ैर," मैंने कहा—"अगर भाव पट जाय तो मैं तैयार हूँ।"

उपस्थित सज्जनों की तरफ़ आँख मारकर जेंक्स ने कहा—"ओह, मैं इनको सस्ते में बेच दूँगा।"

"सस्ता आप किसे कहते हैं ?" मैंने पूछा।

मेज़ के चारों ओर ख़ूब सा धुआँ छोड़ते हुए जेंक्स ने फिर एक आँख मारी और उत्तर दिया—"मैं उन्हें पचास डालर में बेच दूँगा।"

"हाँ, हैं तो सस्ती! पचास डालर में आप अपनी मूँछें बेच देंगे ?"

"बेच दूँगा।"

"दोनों मूँछें ?"

"दोनों मूँछें।"

"मैं ख़रीद लूँगा। तो मैं कब तक उन्हें ले सकता हूँ ?"

"आपकी इच्छा। जब आप उनकी माँग करें।"

"बहुत बेहतर; वे मेरी हो गईं। मेरा ख़याल है कि मैं कम से कम दुगनी रक़म पाऊँगा।"

इस सौदे की रसीद मैंने ले ली, जो इस प्रकार थी—

"अपनी पूरी मूँछों की कुल क़ीमत, मुबलिग़ पचास डालर नक़द सोल० स्मिथ से वसूल पाई। मुझ पर वाजिब है कि

इनकी अच्छे ढङ्ग से हिफ़ाज़त रक्खूँ और जब उपर्युक्त सज्जन माँगें, उन्हें सौंप दूँ ।

द० जे० जेंक्स ।"

पचास डालर की रक़म अदा कर दी गई, और जेंक्स साहब सेण्ट्रल बैङ्क के पाँचों क्रास नोट अपने सब परिचितों को दिखा-दिखाकर कहते हुए कि 'मूँछों पर क्या सौदा बनाया है' आफ़िस से रवाना हुए—प्रसन्न !

दलाल और उसके सब मित्र मुझ पर हँसने लगे कि मैं इतनी आसानी से मूँछों के चक्कर में आ गया । "कोई परवा नहीं ।" मैंने कहा—"जीतनेवालों को ही हँसना शोभा देता है। आप विश्वास करें कि इन मूँछों से मुझे बड़ा नफ़ा होगा ।"

इसके बाद एक सप्ताह तक जब कभी जेंक्स साहब मिलते, वे मुझसे यही पूछते कि आप कब अपनी मूँछें लेंगे । मैं जवाब दे देता कि 'जब मुझे आवश्यकता होगी, मैं बता दूँगा । आप उन्हें ख़ूब अच्छी तरह रखिए, समय-समय पर तेल-वेल लगाते रहिएगा । दो-चार दिन में माँग ही लूँगा ।'

उन्हीं दिनों एक शानदार नाच का इन्तज़ाम किया जा रहा था । पता लगाने पर मालूम हुआ कि जेंक्स साहब भी उसके प्रबन्धकों में हैं । और क्यों नहीं ? आप (शायद अपनी मूँछों की ही वजह से) महिलाओं में बड़ा आदर पाते थे । मैंने सोचा कि नाच आरम्भ होने के पूर्व ही क्यों न मैं अपनी मूँछें माँग लूँ ।

एक दिन सुबह के वक्त एक नाई की दूकान पर मुलाक़ात हो गई । एक बड़े से आईने में वे अपना हाव-भाव देख रहे थे; साथ ही मेरी मूँछों को बड़ी तेज़ी से कङ्घी करते जाते थे ।

"ओह, आप हैं, जनाब !" आईने में मेरे अक्स को सम्बोधन करते हुए उन्होंने कहा—"अपनी मूँछें लेने आये हैं शायद ?"

"नहीं, कोई जल्दी नहीं।" मैंने जवाब दिया, और अपनी दाढ़ी बनवाने के लिए बैठ गया।

उन्होंने अपनी टाई में अन्तिम गिरह लगाते हुए कहा—"आप तो जानते हैं, मैं हर समय इसके लिए तैयार हूँ।"

नाई ने मेरे चेहरे पर साबुन लगाया। कुछ विचार-मग्न-सा होकर मैं बोला—"सोचता हूँ, जैसे और दिन, वैसे ही आज। अस्तु, आप बैठ ही जायँ और मूँछों पर नाई को उस्तरा फेरने दें।"

"आप कल तक और न रुक सकेंगे?" उन्होंने कुछ रुककर पूछा—"आपको तो मालूम ही है, आज रात को 'बाल-नाच' होगा—"

"हाँ, जरूर होगा। मेरी राय में आपका मूँछ मुँड़ाकर ही वहाँ जाना बेहतर है। पर मैं कोई वजह नहीं देखता कि आप मेरी मूँछें लेकर क्यों उस महफ़िल में जाने की उम्मीद रक्खें। अस्तु, अब आप बैठ जाइए।"

कुछ चिढ़कर उन्होंने आज्ञा का पालन किया। कुछ ही क्षणों में उनके चेहरे पर साबुन के झाग फूल उठे। नाई ने अपना उस्तरा चमकाया और मूँड़नेवाला ही था कि उसी दम मेरा विचार बदल गया।

"नाई! रहने दो।" मैंने कहा—"अभी फ़िलहाल इनको मूँड़ने की जरूरत नहीं।" अस्तु, उसने चुपचाप अपना उस्तरा रख दिया, और जेंक्स साहब कुछ आश्चर्य और बहुत कुछ गुस्से में भरकर कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए और बोले—"यह तङ्ग करना है! आपने अपनी मूँछों की माँग की है तो ले जाइए।"

मैंने सिर्फ इतना कहा—"मैं समझता हूँ, प्रत्येक मनुष्य को अधिकार है कि वह अपने माल का जैसा चाहे, उपयोग

करें।" जेंक्स को उसी तरह मुँह धोते छोड़कर मैं वहाँ से चला आया।

शाम को खाने के वक्त मूँछों पर बात चल पड़ी। कदाचित् शहर भर को उसकी सूचना मिल गई थी। जेंक्स साहब का तो सड़क पर चलना मुश्किल हो गया था। लड़के खिल्ली उड़ाते थे कि वह देखो, वह आदमी सोल० मियाँ की मूँछें लगाये जा रहा है। मूँछें अब अत्यधिक बड़ी और लम्बी भी हो गई थीं, क्योंकि जेंक्स को उन्हें कतरने का साहस नहीं होता था। सारांश यह कि मुझे पक्का विश्वास हो गया कि जेंक्स बड़ी बेचैनी से इस बात की प्रतीक्षा कर रहा है कि मैं अपना माल अपने अधिकार में ले लूँ। जिन व्यक्तियों के सामने यह अजीब सौदा हुआ था—उन्हीं में से कुछ लोग संयोग से खाने पर भी आ गये थे और मेरे सामने ही बैठे थे। उन्होंने मुझे बाध्य कर दिया कि मैं अपनी मूँछें उसी दिन ले लूँ। इस प्रकार जेंक्स को या तो मुँछ-मुण्डा ही 'बाल' में जाना पड़ेगा, या फिर उन्हें मजबूरन घर पर ही रह जाना होगा। मैं सहमत हो गया कि हाँ, अब फल तोड़ने का समय आ गया है। मैंने वादा किया कि अगर सब लोग उस दलाल के आफ़िस में इकट्ठा हों जहाँ यह सौदा हुआ था तो मैं जेंक्स को नाच-घर जाने से पहले बुला भेजूँगा। सबों ने वचन दे दिया कि मुँछ-मुण्डन देखने के लिए उपरोक्त आफ़िस में वे अवश्य मौजूद रहेंगे। अस्तु, मैंने जेंक्स साहब और एक नाई के लिए आदमी भेज दिया। जेंक्स साहब तशरीफ़ लाये, लेकिन उनकी मुद्रा से साफ़ प्रकट हो रहा था कि वह इस अचानक बुलावे के कारण बहुत भुँझलाये हुए हैं। मुँछ-मुण्डन-क्रिया देखने के लिए उत्सुक दर्शकों से दलाल का आफ़िस खचाखच भर गया था। यह देखकर तो उनकी भुँझलाहट और भी तीव्र हो उठी।

'आइए, जल्दी कीजिए,' उन्होंने कहा, और अपना सिर काउण्टर के सहारे टेक दिया। 'मैं यहाँ बहुत देर नहीं रुक सकता, कई महिलाएँ मेरी प्रतीक्षा कर रही हैं। उन्हें 'बाल' में ले जाना है।'

'दुरुस्त, बिलकुल दुरुस्त—मुझे खयाल है कि आप प्रबन्धकों में से एक हैं। मियाँ नाई! साहब को देर न लगाना। फ़ौरन ही काम शुरू कर दो!'

जरा सी देर में साबुन लग चुका। तीन हाथ उस्तरे के चले और चेहरे के एक तरफ़ की रौनक़ साफ़!

'रुको मत,' जेंक्स ने कहा; 'हाथ आगे चलाओ। समय बहुत कम है। महाशय को उनकी मूँछें दे दो! वह अधीर हो रहे हैं।'

'हरगिज़ नहीं!' मैंने शान्त स्वर से कहा, 'मुझे किसी तरह की कोई जल्दी नहीं; और अब मैं सोचता हूँ कि अवश्य आपका समय इस क्षण बहुत ही मूल्यवान् होगा। कई महिलाएँ आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं। आपको उन्हें नाच-घर में ले जाना है। मुझे यक़ीन है कि मैं दूसरी मूँछ अब आज की रात नहीं लूँगा।'

दर्शक बड़े जोर से हँस पड़े। जेंक्स ने एक झलक आईने में जो देखी तो आँखें खुल गईं; एक मूँछ में वह कितने अजीब लग रहे थे! वह मुझसे अनुरोध करने लगे कि अपनी कुल पूँजी ले लो। मैंने कहा 'मुझे कुल की जरूरत नहीं है। मुझे अधिकार है, मैं जब चाहूँगा ले लूँगा। कोई मुझे सबके लेने पर मजबूर नहीं कर सकता। और इस समय तो मुझे अपना आधा ही माल चाहिए।' मैंने स्पष्ट रूप से उन्हें समझा दिया 'मैं आपके साथ कठोर-हृदय क़र्ज़दारों की तरह व्यवहार

नहीं करूँगा। और अगर आप ठीक तरीक़े से रहेंगे तो मैं आपका बक़ाया उधार शायद कभी माँगूँ भी नहीं !'

जब जेंक्स साहब को यक़ीन हो गया कि मैंने बाक़ी मूँछ को न लेने का दृढ़ निश्चय कर लिया है और उन्होंने सुलह की बात-चीत शुरू की—कहा, १० डालर ले लीजिए, २० ले लीजिए, ३०, ४०, ५० डालर तक कहा कि ले लो, और बाक़ी मूँछ अपनी उधार न रक्खो। दर्शक-गण इस पर ख़ूब ज़ोर से हँसते रहे। मैंने अधिकार के स्वर में कहा, 'देखिए जनाब! बात-चीत से कोई लाभ न होगा। मेरा निश्चय है कि आप अभी और महीना दो महीना मेरी ओर से बाक़ी मूँछ रक्खें।

हारकर उन्होंने पूछा, 'क्या आप किसी क़ीमत पर भी यह मूँछें अब मेरे हाथ वापिस नहीं बेच सकते ?'

'हाँ,' मैंने कहा, 'अब आप कुछ दूकानदारों की तरह बातें कर रहे हैं। ज़रूर ! मैंने नफ़ा उठाने के लिए उनको ख़रीदा है और अगर मुझे अच्छे दाम मिलें तो मैं उनको बेच दूँगा।'

'आप क्या दाम बोलते हैं ?'

'सौ डालर। मुझको दुगना रुपया अवश्य चाहिए।'

'इससे बिलकुल कम नहीं ?'

'इससे कौड़ी कम नहीं; और मुझे तो इस दाम पर बेचने की भी जल्दी नहीं है।'

'अच्छा, तो मैं ख़रीद लेता हूँ,' बड़े करुण स्वर में उन्होंने कहा; 'यह लीजिए अपना रुपया ! और—नाई ! इस कम्बख़्त मूँछ को फ़ौरन् से पेश्तर साफ़ कर दो। नाचघर के लिए मुझे देर हो जायगी।'

अँधेरा नुक्कड़

अगर मेरी याद मुझको धोखा नहीं दे रही है तो यह १० जून के ११ बजे दोपहर की बात है, जब मैं वह लम्बी और हल्की चढ़ाई चढ़ रहा था जिसे लिंकन का "अँधेरा नुक्कड़" कहते थे। मेरा तो विश्वास है इस टुकड़ी का यह नाम इसके नैतिक पतन के कारण ही पड़ा होगा। जिस समय की यह बात है देश के इस भाग में ऐसा ही नैतिक तम छाया हुआ था। यह तम यदि अपेक्षाकृत यहाँ कुछ अधिक था तो इतना अधिक, कि हम उसकी कल्पना नहीं कर सकते। अगर कोई बता सके कि ऐसा पाप-कर्म या ठगी, जो लिङ्कन (अर्थात् 'प्रकाश-नगर') के इस भू-भाग में नहीं होती रही है, तो वह स्वयं ठगी के फ़न में उस्ताद और पापियों के दल का नेता होगा। मज़ाक़ न समझिए, उस समय से तो लिंकन-नगर वास्तव में इस सत्य का एक जीता-जागता उदाहरण बन गया है कि जहाँ अन्धकार है वहाँ प्रकाश भी है। विरोधाभास उपस्थित करने के लिए ही अगर मैं गम्भीरता में हास्य का पुट मिलाने का साहस करूँ तो इसी ज़िले से जीवन-परिवर्तन के ऐसे-ऐसे उदाहरण पेश कर सकता हूँ जिनमें कितने ही मनुष्यों ने पाप और अज्ञान को छोड़कर सत्कर्म और पवित्रता का जीवन अपना लिया है;—ऐसी काया-पलट हुई है कि ईसाइयत के आदि सन्त प्रचारकों के युग से लेकर आज तक वैसी देखने में नहीं आई। कहने का अभिप्राय है कि कुछ पाठक-वृन्द यह न समझ बैठें कि जो घटना मैं अब सुनाने जा रहा हूँ वैसी उस ज़िले में अक्सर होती रहती है जहाँ से उसका कहानी में सम्बन्ध है।

उपरोक्त काल और समय पर इस "अँधेरे नुक्कड़" का नैतिक रूप जो भी रहा हो, कम से कम इसका प्राकृतिक रूप तो अन्धकार-मय नहीं था। वसन्त की छटा सब ओर छाई हुई थी। इस स्थान का ऊँचा-नीचा भूमि-तल, इसकी हरी-भरी झाड़ियाँ, मचलते हुए झरने, चिड़ियों का कलाप, और इसके शरमीले-से फूल इन्होंने मधु-ऋतु को और भी मोहक बना दिया था।

मौसम के इन नजारों में खोया हुआ, मन्त्र-मुग्ध सा, मैं धीरे-धीरे पहाड़ी पर ऊपर की ओर जा रहा था—कि जोर-जोर की आवाजों और गन्दी भाषा में डाँट-डपट के ऊँचे स्वरों ने मुझे चौंका दिया। यह गुल-गपाड़ा मेरे आगे लगभग दो सौ गज के फ़ासले पर और सड़क से कोई सौ गज बाईं तरफ़ को हो रहा था।

"करोगे? और करोगे?"

"हाँ, कर सकता हूँ, मुझमें जोर है करने का!...अरे बाप रे...आह, तेरे घर में साँप निकलें! तेरी खाक उड़े! जहन्नुम की आग बरसे तुझ पर! बस, अब छोड़ मुझे, निक स्टोवल! लड़ाई हो ली! बस, अब यहीं फ़ैसला! क़सम अपनी जान की, जो मैं न इसकी गरदन दबोच डालूँ, और 'छोड़ो!' कहने के पहले ही न इसकी सारी बकवाद निकाल दूँ।"

"बस, निक, अब मत दबाओ, जरा छोड़ भर दो इस जङ्गली जानवर को; फिर मैं इसे ठीक कर लूँगा। इसको तो मैं दिखाऊँगा कैसे निपटते हैं। बोल, आयेगा मेरे सामने?"

"हाँ-हाँ, निपट लें मुझसे! जूते मार उसके, जो न आये सामने!"

"बस ठीक है। वह कहना टाम हैंस का कि मरदानगी देखी गई। अब हो जाने दो।"

इस प्रकार दङ्गा होता रहा। बीच-बीच में अनगिनती क़समें और गालियाँ भी दी जाती रहीं—ऐसी-ऐसी कि उन्हें सङ्केत में कहना भी मेरे बस का नहीं है। और भी बहुत कुछ कहा-सुनी हुई, जो मैं ठीक-ठीक सुन नहीं सका।

रहम ख़ुदा का!—मैंने सोचा, कैसे लुँगाड़ों ने यह पवित्र मौसम, ऐसा यह स्वर्गिक निकुञ्ज, राक्षसों का-सा हू-हल्लड़ मचाने के लिए चुना है! मैंने क़दम बढ़ाये। मैं क़रीब-क़रीब उस झुरमुट के सामने ही पहुँच चुका था, कि हिकरी और बान-वृक्षों की झाड़ियों में से (जो लड़नेवालों को छिपाये हुए थीं) थोड़ी-थोड़ी देर बाद और अस्पष्ट रूप से मैंने एक या कई आदमियों की झलक देखी। ये लोग बड़े आवेश में लड़ते हुए मालूम होते थे। मुक्केबाज़ी में भिड़ जाने पर लोग साँस ले-लेकर जिस प्रकार की क़समें और गालियाँ देते जाते हैं, वह सभी बीच-बीच में मेरे कानों में पड़ती रहीं। घोड़े से उतरकर अपनी पूरी तेज़ी के साथ मैं जल्दी-जल्दी घटना-स्थल की ओर बढ़ा। अभी आधे फ़ासले तक ही पहुँचा हूँगा कि मेरे देखते-देखते लड़नेवाले ज़मीन पर आ रहे, और थोड़ी देर की गुत्थम-गुत्था के बाद देखा कि ऊपरवाला (क्योंकि जो नीचे था उसे मैं नहीं देख पाता था) ज़ोर से अपने दोनों अँगूठे नीचे ले गया, और उसी क्षण एक चीख़ मैंने सुनी, जो अत्यधिक यातना के स्वर में थी—"बस्स! आँखें निकल गईं मेरी!"

इस चीख़ ने मुझे स्तम्भित कर दिया। जिस जगह मैंने वह चीख़ सुनी थी, थोड़ी देर के लिए मैं वहीं का वहीं खड़ा रह गया। इस नारकीय कृत्य में जो लोग सहयोग दे रहे थे, मेरे आते ही वहाँ से भाग निकले; कम से कम मुझे तो ऐसा ही मालूम हुआ, क्योंकि वे नज़र आये नहीं।

"अब मर यहाँ, और भुस खा !" विजेता ने (जो अठारह वर्ष का जवान था) भूमि से उठते हुए कहा, "अब कचहरी के सामने आकर अपनी हेकड़ी दिखा मुझ पर! अब दिखा, दिखायेगा अब ? कर सकता है तो अब कर ले अपनी उल्लू की-सी आँखें अन्दर !"

इसी क्षण उसने पहली बार मुझे देखा। वह बेहद सकपकाया और वहाँ से चलने लगा, किन्तु मैंने अपने पवित्र कर्तव्य-भाव से और अपराधी के घोर अन्याय के कारण कठोर होकर कहा, "वापिस आ, ओ हैवान ! और अपने जिस भाई को सदा के लिए बेकार कर दिया है उसकी पीड़ा कम करने में मदद दे !"

मेरे रोष-पूर्ण सम्बोधन से उसकी सम्भ्रान्त मुद्रा एकदम चली गई; और नाक चढ़ाकर उसने जवाब दिया, "बिना वजह तेवर दिखाने की जरूरत नहीं। न वहाँ कोई है, न वहाँ कोई था। मैं तो सिर्फ यह देख रहा था कि मैं कैसा लड़ सकता हूँ।" यह कहकर वह अपने हल की ओर मुड़ गया जो घटना-स्थली से पचास गज़ की दूरी पर खेत की बाड़ के एक कोने में खड़ा था।

और—क्या सहृदय पाठक विश्वास कर सकेंगे ?—उसका कथन सत्य था। जो कुछ मैंने सुना या देखा था वह केवल लिंकन-नगर के किसी नाटक का रिहर्सल (पूर्व-अभिनय) मात्र था, जिसमें उस नौजवान ने कचहरी के किसी दङ्गे का पूरा-पूरा अभिनय किया था।

जिस स्थल पर से वह उठा था, मैं वहाँ गया। ज़मीन की मुलायम मिट्टी में, मनुष्य की आँखों के बराबर फ़ासले पर वहाँ दोनों अँगूठों के निशान बने हुए थे, जिन्हें उसने हथेली की गुद्दी तक गड़ा दिया था। चारों ओर की जमीन इस तरह उखड़ी हुई थी, जैसे दो बारहसिंघों की वहाँ लड़ाई हुई हो !

मिस्टर टोलमैन

मि० टोलमैन एक ऐसे सज्जन थे जिनकी अवस्था देखने में कभी तो कुछ लगती थी, कभी कुछ। बाज मर्तबा तो, जब वह अपने व्यवसाय के, या अन्य मामलों के, सम्बन्ध के विचार में गहरे डूबे रहते, तब उन्हें कोई ५५ या ५७ या ६० तक का भी समझ सकता था; पर आम तौर से, जब कार्य सन्तोष-प्रद और साधारण रीति से चलता रहता, तब वह ५० के लगभग जँचते। लेकिन, विशेष अवसरों पर, जब संसार कुछ असाधारण रूप से आकर्षक लगने लगता, तब उनकी उम्र घटकर ४५, बल्कि उससे भी कम की मालूम होती।

वह एक व्यवसायी फ़र्म के अध्यक्ष थे। सच तो यह है, कि अकेले वही उसके सदस्य थे। फ़र्म का नाम पुसे एण्ड कं० था। लेकिन पुसे मर चुका था कभी का, और वह "कं०" जिसके कि मि० टोलमैन सदस्य थे, तोड़ दी गई थी। नामादि-सहित सारा व्यवसाय हमारे अवस्था-प्राप्त नायक ने ख़रीद लिया था, और कई वर्षों से उसे सफलता और लाभ के साथ चला रहे थे। उनके लेन-देन की जगह छोटी सी और शान्त थी लेकिन उसी स्थान पर बहुत सा रुपया पैदा किया जा चुका था। वस्तुतः मि० टोलमैन बहुत धनवान् व्यक्ति थे—हाँ, बहुत धनवान्।

तथापि, एक दिन जब वह जाड़े की सन्ध्या में अपने लेन-देन के कमरे में बैठे थे, वह बहुत ही बूढ़े लग रहे थे। वह अपना हैट, ओवरकोट, दस्ताने और फ़र का कालर पहने थे। कार्यालय के सब लोग घर जा चुके थे; और वे भी, हाथ में

कुञ्जियाँ लिये—ताला लगाकर जाने को तैयार ही थे। वे बहुधा औरों से देर तक ठहरते थे और घर लौटते समय रास्ते में अपने हेडक्लार्क मि० कैण्टरफील्ड के यहाँ कुञ्जियाँ छोड़ जाते थे।

पर मि० टोलमैन को मानो कोई जल्दी नहीं थी जाने की। वह बैठे रहे केवल, और सोचते रहे, और अपनी प्रकट अवस्था में वृद्धि करते रहे। वास्तव में उनका घर जाने का मन नहीं था। वह घर जाते-जाते उकता गये थे। इसलिए नहीं कि उनका घर सुखमय न था। नगर में किसी अकेले गण्य-मान्य व्यक्ति के पास ऐसे बढ़िया या इनसे अधिक सुख-पूर्ण कमरों का मकान नहीं था। यह ऊब इसलिए नहीं थी कि वह अकेला अनुभव करते थे, या यह कि उनका घर गृहिणी और बाल-बच्चों के प्रकाश से भरा-पुरा नहीं था। वह अविवाहित रहकर भी पूर्णतया सन्तुष्ट थे। जीवन की यह परिस्थिति उनके ठीक अनुरूप थी। लेकिन यह सब कुछ होते हुए भी घर जाने से वह उकता रहे थे।

"मैं चाहता हूँ," मि० टोलमैन ने दिल ही दिल में कहा, "कि मुझे घर जाने में कुछ सुख का अनुभव होता!" और फिर वह उठे और एक-दो दफ़ा कमरे में टहले; लेकिन जब इससे भी उस ओर उनकी रुचि न बढ़ी, तो वह पुनः बैठ गये। "चाहता हूँ कि घर जाना मेरे लिए ज़रूरी होता," उन्होंने कहा "लेकिन ऐसा है नहीं।" और तब वह फिर विचार-मग्न हो गये। "जिस बात की मुझे ज़रूरत है," कुछ देर के बाद वह बोले, "वह है अपने ही ऊपर अधिक निर्भर होना—ऐसा अनुभव करना, कि अपने लिए मैं आवश्यक हूँ। मैं इस क्षण नहीं हूँ। कम से कम इसी तरह मैं घर जाना बन्द करूँगा। औरों की ईर्ष्या करने में क्या बुद्धिमानी जब कि उन सभी वस्तुओं को मैं भी प्राप्त कर सकता हूँ जो औरों के पास हैं

अथवा चाहूँ तो न भी करूँ ?" मि० टोलमैन ने बाहर आकर ताला लगाते हुए कहा—"और अब मैं भी उन्हें प्राप्त करूँगा।" सड़क में एक बार आने, और तेजी से चलने पर सहज ही और शीघ्रता से उनके विचारों ने एक योजना का रूप धारण कर लिया, जो कि हेडक्लार्क के घर पहुँचते पहुँचते बिलकुल पक्की हो गई। मि० कैण्टरफ़ील्ड अपने परिवार के सङ्ग भोजन पर बैठने जा ही रहे थे कि उनके मालिक ने घण्टी पर उन्हें आवाज दी, अत: स्वयं ही उन्होंने दरवाजा खोला। "मैं केवल एक या दो मिनट आपका लूँगा जरा; मि० कैण्टरफ़ील्ड को कुञ्जियाँ देते हुए मि० टोलमैन ने कहा। "हम लोग बैठकखाने में चलें न ?"

जब उनके मालिक चले गये, और मि० कैण्टरफ़ील्ड घर-वालों के साथ खाने में शरीक हुए, तो उनकी पत्नी ने तुरन्त पूछा—मि० टोलमैन क्या कहना चाहते थे ?

"सिर्फ़ यही कि वह कल बाहर जा रहे हैं, मुझे सब कारबार की देखभाल करनी होगी और उनके निजी पत्र भेजते रहने होंगे"—एक नगर का नाम लिया, जो कि सौ मील से कम ही दूर था।

"वह कब तक बाहर रहने के लिए जा रहे हैं ?"

"यह उन्होंने कुछ कहा नहीं," मि० कैण्टरफ़ील्ड ने उत्तर दिया।

"मैं तुम्हें बताऊँ कि उन्हें क्या करना चाहिए ?" गृहिणी ने कहा, "उन्हें चाहिए कि तुम्हें फ़र्म में अपना साझी बना लें, और तब वह बाहर जाकर जी चाहे जब तक ठहर सकते हैं।"

"अब भी तो वह ऐसा कर सकते हैं," उसके पति ने जवाब दिया। "जब से मैं उनके यहाँ आया हूँ, उन्होंने कितनी ही यात्राएँ की हैं, और उनकी अनुपस्थिति में काम बिलकुल उसी

तरह चलता रहा है जैसा कि उनके यहाँ रहने पर चलता है। वह इसको जानते हैं।"

"पर तब भी तुम साझीदार तो होना चाहोगे ही?"

"हाँ, क्यों नहीं!" मि० कैण्टरफील्ड ने कहा।

"और साधारण कृतज्ञता के भाव से भी प्रेरित होकर उन्हें चाहिए कि तुम्हें अपना साझी बना लें,"—स्त्री ने कहा।

मि० टोलमैन ने घर पहुँचकर एक वसीयतनामा लिखा। उन्होंने कुछ थोड़ी सी पैत्रिक सम्पत्ति छोड़कर शेष अपनी सब सम्पत्ति देश की एक सबसे शक्तिशाली और समृद्ध दानशील संस्था को समर्पित कर दी।

"लोग समझेंगे यह मेरी सनक है," उन्होंने अपने मन में कहा; "और अगर अपनी योजना को अमल में लाने के समय ही मैं परलोक सिधार जाऊँ, तो अपनी सद्बुद्धि प्रमाणित करने का भार मैं ऐसे लोगों पर छोड़ जाऊँगा, जिनके अन्दर मेरे लिए लड़ने की यथेष्ट योग्यता है।" सोने जाने से पूर्व अपने वसीयतनामे पर उन्होंने हस्ताक्षर कर दिये थे, और उस पर गवाही भी करा ली थी।

दूसरे दिन उन्होंने एक सन्दूक में सामान भरा और पासवाले नगर के लिए प्रस्थान कर दिया। वह कह गये कि वह किसी भी समय लौट आयेंगे, इसलिए उनके रहने के कमरे तैयार रहते थे। अगर आपने उन्हें रेलवे-स्टेशन की ओर जाते हुए देखा होता, तो आप उन्हें ४५ वर्ष की अवस्था का समझते। जब मि० टोलमैन अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचे तो वह अस्थायी रूप से एक होटल में ठहर गये, और अपने अगले ३–४ दिन उन्होंने घूम-घामकर अपनी इच्छित वस्तु को खोजने में व्यतीत किये। वह क्या चाहते थे इसकी परिभाषा करना कठिन है, लेकिन

जिस तरह से उन्होंने इस मामले को अपने सामने रक्खा, वह कुछ कुछ इस प्रकार था—

"मैं चाहता हूँ कि मुझे एक छोटी सी जगह मिल जाय, जहाँ मैं रह सकूँ और कोई ऐसा काम-धन्धा कर सकूँ जिसकी देख-रेख मुझसे स्वयं हो सके, और जो मुझे हर तरह के लोगों के सम्पर्क में ले आवे—ऐसे लोगों के सम्पर्क में, जिनसे कि मुझे दिलचस्पी हो। रोजगार कोई छोटा सा ही हो, क्योंकि मैं नहीं चाहता कि मुझे कठिन परिश्रम करना पड़े; कोई सुखप्रद, मजे का धन्धा; क्योंकि मनोविनोद ही उसका अभिप्राय है। मैं किसी प्रकार की एक दूकान करना चाहता हूँ, क्योंकि वह मनुष्य को अपने सहजातियों के आमने-सामने लाती है।"

वह शहर, जिसमें मि० टोलमैन इधर-उधर घूम रहे थे, देश भर के ऐसे स्थानों में सर्वोत्तम था जहाँ कि उन्हें अपने मन का धन्धा मिल सकता था। यह भिन्न प्रकार की छोटी-छोटी दुकानों से भरा था। लेकिन मि० टोलमैन को ऐसी कोई दुकान जल्दी नहीं मिल रही थी जो उनके आदर्श से मिलती-जुलती हुई होती। सूखी चीजों की एक छोटीसी दूकान के लिए दूकानदार का स्त्री होना जरूरी हो जाता था। परचून की दूकान से तो उन्हें बहुत से दिलचस्प ग्राहक मिलते, लेकिन परचून के बारे में वह कुछ अधिक नहीं जानते थे; और फिर इस व्यवसाय में उन्हें कोई ख़ूबसूरती या नफ़ासत भी नहीं दिखाई दी। एक चर्म-विक्रेता की छोटी सी दूकान देखकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। बहुत आराम की दूकान थी। और उसमें काम भी शायद इतना अधिक नहीं था जो किसी को थका मारे। चिड़ियों और पशुओं की ख़ाल को, जो भूसा भरने के लिए लाई जाती थी, किसी व्यवहार-कुशल मिस्त्री के यहाँ भेज सकते थे, और उसके द्वारा उन्हें भले प्रकार सजाकर ग्राहक

के लिए रखवा सकते थे। वह—लेकिन नहीं, ऐसे व्यापार में हाथ डालना बड़ा बुरा होगा जिसके बारे में वह बिल्कुल कुछ नहीं जानते। किसी छोटी सी मरी हुई चिड़िया या मछली के विषय में कोई साधारण सा प्रश्न पूछा जाने पर एक चर्मविक्रेता को अपने अज्ञान के कारण शर्मिन्दा नहीं होना होगा। अतः उन्होंने जबरदस्ती अपने आपको उस आकर्षक दूकान की खिड़की से हटा लिया, जहाँ खड़े-खड़े वे सोच रहे थे कि कहीं उनकी शिक्षा का प्रबन्ध यदि और प्रकार से हुआ होता तो समय पाकर वे संसार को दिखला सकते कि वह कितने हास्य-प्रिय और सरस हृदय 'मि० वीनस' हैं। एक दूकान जो अन्त में उन्हें अपने सब से अधिक अनुकूल मालूम हुई, वह थी जिसकी ओर आकर्षित होने से पहले वे कई बार उसके पास से गुजर चुके थे और कई बार उसे देख चुके थे। बगल की एक गली में वह ईंटों के एक छोटे से मकान में स्थित थी, तथापि वह नगर की मुख्य व्यवसाय-मण्डी से कुछ दूर न थी। दूकान लिखने-पढ़ने के सामान और विभिन्न प्रकार की छोटी-मोटी वस्तुओं से सम्बन्ध रखती थी जिन्हें कि आसानी से श्रेणी-बद्ध नहीं किया जा सकता। वे प्रदर्शन-खिड़की में ऊँचा करके रक्खे हुए उन तीन क़लम-तराशों को देखने के लिए ठिठक गये थे, जो एक दफ़्ती में बँधे हुए थे; इसके सहारे के लिए एक तरफ़ एक शतरञ्जी रक्खी थी—उसके पीछे की ओर 'एशिया का इतिहास' सुनहरे अक्षरों में लिखा हुआ—और दूसरी ओर एक छोटी सारङ्गी, जिस पर "एक डालर" का चिट लगा था। जब जब उन्होंने इन वस्तुओं के बीच में से दूकान के भीतर झाँका, जो इस समय प्रकाशित हो चुकी थी, तो क्रमशः उन्हें लगा कि यह तो एक आकर्षक और दिलचस्प व्यवसाय-स्थान उनके आदर्शों के अनुरूप सा है। कुछ भी हो, वह अन्दर जाकर

उसे देखेंगे। खिड़की में रक्खी उतने कम मूल्य पर भी सारङ्गी लेने का तो उनका मन नहीं था, पर एक नया जेबी चाक़ू तो काम का निकल ही आयेगा! अस्तु, वह दूकान के अन्दर चले गये, और चाक़ू दिखाने के लिए कहा।

दूकान लगभग साठ वर्ष की एक बहुत प्रसन्न-चित्त वृद्धा के प्रबन्ध में थी, जो एक छोटे से कौण्टर के पीछे बैठी हुई कुछ सी रही थी। जब वह खिड़की पर गई और बहुत होशियारी से उसमें सजाई हुई वस्तुओं में से क़लमतराशवाली दफ़्ती को निकालने लगी, उस समय अपने चारों ओर मि० टोलमैन ने देखा। दुकान बिल्कुल छोटी थी, फिर भी उसमें काफ़ी सामान मालूम होता था। कौण्टर के पीछे आल्मा-रियों के तख़्ते थे, और सामने की दीवार पर भी तख़्ते लगे थे। और वे सब किसी न किसी वस्तु से अच्छी तरह भरे हुए थे। वृद्धा की कुर्सी के पास कोने में एक कोयले की अँगीठी थी, जिसमें ख़ूब आग सुलग रही थी, दूकान के पिछले भाग में, दो सीढ़ियों के ऊपर, एक शीशे का दरवाजा अंशतः खुला था, जिसके बीच से एक छोटा-सा कमरा उन्हें दिखाई दिया; एक लाल क़ालीन फ़र्श पर बिछी थी, और एक छोटी मेज़, जान पड़ता था, खाने के लिए लगी थी।

जब वृद्धा चाक़ू दिखाने लाई, तो मि० टोलमैन ने उन्हें देखा और बहुत सोच-विचार के बाद उनमें से एक छाँटा जो किसी लड़के को देने लायक़, उनके विचार से अच्छा चाक़ू था। इसके बाद वह काग़ज-तराश, ताशों के एक खेल (व्हिस्ट) का नक़्शा, और इस प्रकार की अन्य छोटी-छोटी वस्तुओं की तरफ़ देखने लगे जो कि कौण्टर* पर शीशे के बक्स में सजा

* वह मेज़ या खिड़की जहाँ ली हुई चीज़ का दाम चुकाते हैं।

कर रक्खी हुई थीं। इन वस्तुओं की ओर देखते हुए वे वृद्धा से बातें करते जाते थे।

वह एक हेल-मेलवाली, मिलनसार स्त्री थी, और कोई बात-चीत करने को मिल जाय तो बहुत प्रसन्न होती थी। अतः इधर-उधर की बातों में ही उसके और उसकी दुकान के बारे में बहुत-सी बातें पूछ लेने में मि० टोलमैन को कुछ भी कठिनाई नहीं हुई। वह विधवा थी और उसका एक लड़का था, जो उसकी बातों से जान पड़ता था, कि चालीस से कम का न होगा। उसका सम्बन्ध एक व्यावसायिक फ़र्म से था और वे दोनों यहाँ बहुत दिनों से रह रहे थे। उसका लड़का जब तक उस फ़र्म में विक्रेता रहा और प्रत्येक शाम को घर आया किया, तब तक तो बड़ा आनन्द था; लेकिन जब से वह यात्रा में, और महीनों के लिए नगर से बाहर रहने लगा था, तब से यह सब उसे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। वह बड़ा अकेला अनुभव करती थी।

मि० टोलमैन का हृदय भर आया, लेकिन वे बीच में बोले नहीं। "अगर मुझसे हो सकता," उसने कहा, "तो मैं यह स्थान छोड़ देती, और गाँव में जाकर अपनी बहन के साथ रहती। यह हम दोनों के लिए अच्छा होता, और हेनरी भ्रमण से लौटने पर जैसे यहाँ आया करता है वैसे वहाँ आया करता।"

"आप ये सब बेच क्यों नहीं डालतीं?" मि० टोलमैन ने ज़रा डरते हुए सा पूछा, क्योंकि वे सोचने लगे थे कि सब इतनी सुगमता से तय हो जाना एकदम निरापद नहीं होगा।

"यह इतना आसान नहीं है" मुस्कराते हुए उसने कहा—"कहीं बहुत समय बाद कोई ऐसा आदमी मिलेगा जो इस जगह को लेना पसन्द करे। स्टोर की खपत अच्छी हो रही थी अवश्य,

लेकिन अब वह बात नहीं रही जो पहले थी, और पुस्तकालय भी तो घटता जा रहा है। अधिकांश पुस्तकें बहुत पुरानी हो रही हैं, और अब नई के पीछे अधिक ख़र्च करने से कोई लाभ नहीं।"

"पुस्तकालय!" मि० टोलमैन बोल उठे—"क्या पुस्तकालय भी आप रखती हैं?"

"हाँ, हाँ" वृद्धा ने उत्तर दिया। "एक ग्राहकों का पुस्तकालय मेरे यहाँ लगभग १५ वर्षों से है। वह देखिए, वह अपने पीछे, ऊपर के दो त़ख्तों पर।"

मि० टोलमैन ने मुड़कर भूरे काग़ज़ी जिल्दवाली पुस्तकों की दो लम्बी क़तारें देखीं; एक छोटी पायदानी सीढ़ी भीतरी कमरे के दरवाज़े के पास रक्खी थी, जिससे इन त़ख्तों तक पहुँचा जा सकता था। वह इससे बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें इसका ध्यान भी नहीं हुआ था कि एक पुस्तकालय भी वहाँ था।

"मैं तो कहता हूँ।"—वह बोले, "ऐसा एक पुस्तकालय चलाना बड़ा मनोरञ्जक होगा—यानी, ऐसा एक छोटा सा पुस्तकालय, मुझे कोई आपत्ति नहीं अगर ऐसा काम मैं स्वयं भी शुरू कर दूँ।"

वृद्ध महिला ने आश्चर्य से ऊपर निगाह उठाई। क्या वे इस धन्धे में आना चाहते हैं? ख़ाली उन्हें देखने से तो उसने ऐसा अनुमान नहीं किया था।

मि० टोलमैन ने अपने विचार उसके आगे स्पष्ट किये। उन्होंने यह नहीं बताया कि अब तक व्यापार-क्षेत्र में वे क्या करते रहे हैं, या मि० कैंटरफ़ील्ड इस समय उनके लिए क्या कर रहे हैं। केवल उन्होंने अपनी वर्त्तमान अभिलाषाओं का उल्लेख किया, और यह स्वीकार किया कि यह उसकी दूकान का आकर्षण ही था जो उन्हें भीतर खींच लाया था।

"तो आप क़लम-तराश नहीं ले रहे ?" जल्दी से उसने पूछा।

"हाँ, हाँ, वह मैं ले रहा हूँ" उन्होंने कहा, "और अगर हम आपस में सौदा बना सकें, तो मैं वस्तुतः विश्वास करता हूँ कि शेष दोनों चाक़ुओं के साथ ही आपकी दूकान के बाक़ी अन्य सामान को भी मैं लेना चाहूँगा।"

वृद्धा रमणी कुछ अस्थिर चित्त से हँसी। वह तो कितना चाहती थी कि आपस में सौदा बन जाय। वह पीछे के कमरे से एक कुर्सी ले आई, और मि० टोलमैन, इस सौदे को तय कर देने के लिए, उसके साथ अँगीठी के पास बैठ गये। इस बीच में बाधा डालने के लिए बहुत कम ग्राहक आये, और ख़ूब अच्छी तरह बातचीत करके उन दोनों ने सौदा तय कर लिया। दोनों इस निष्कर्ष पर पहुँच गये कि मूल्य-भाव तय करने में कोई कठिनाई नहीं होगी, और न दूकान चलाने में मि० टोलमैन की योग्यता में, वर्त्तमान सञ्चालिका से थोड़ा सा निर्देशित होकर, कोई क़सर ही रह जायगी। मि० टोलमैन वहाँ से उठकर गये तो यह निश्चित कर गये कि वह दो एक दिन में, जब वृद्धा का पुत्र हेनरी घर मौजूद रहेगा, फिर आकर मिलेंगे, और तब इस मामले की पूर्ण रूप से व्यवस्था हो जायगी।

तीनों जब मिले तो सौदा जल्दी ही पट गया। चूँकि हरेक पार्टी इसको तय करने की इतनी इच्छुक थी, इसलिए बहुत कम कठिनाइयाँ बीच में उपस्थित की गईं। वृद्धा तो वास्तव में दूकान के बदलने में कुछ विलम्ब के पक्ष में थी; क्योंकि वह चाहती थी कि हर एक तख़्ते की, और कोने-कोने की, और उस स्थान की एक-एक वस्तु की वह, झाड़-पोंछ कर, सफ़ाई कर दे; लेकिन मि० टोलमैन को दूकान पर अधिकार लेने की जल्दी थी। और चूँकि पुत्र हेनरी को बहुत शीघ्र एक दूसरे दौरे पर चला जाना था, इसलिए वह चाहता था कि उसके जाने

के पहले उसकी मा वहाँ से अलग होकर कहीं ठिकाने से रहने लगे। कोई खास वस्तु वहाँ से हटानी नहीं थी, सिवा कुछ सन्दूक और बैंड-बक्स के तथा पुराने जमाने की कुछ फर्नीचर की चीजों के, जो वृद्धा महिला के लिए विशेष मूल्य रखती थीं; क्योंकि मि० टोलमैन ने मकान की प्रत्येक वस्तु को उसी अवस्था में खरीद लेने का आग्रह किया ठीक जिसमें वह रक्खी थी। उन्होंने अपने मन में कहा कि इस तमाम पर मुझे इतना भी खर्च नहीं पड़ा जितना कि मेरे किसी परिचित को एक घोड़ा मोल लेने में पड़ता। नियम-पटु पुत्र हेनरी ने स्टाक का हिसाब मिलाया, और मि० टोलमैन ने वृद्धा से बहुत-सी बातें सीखीं जिनमें उसने समझाया कि भिन्न-भिन्न वस्तुओं का विक्रय-मूल्य, उनमें लगी हुई छोटी-छोटी चिटों द्वारा किस प्रकार मालूम करना चाहिए; और खास तौर से पुस्तकालय के प्रबन्ध के विषय में उसने उन्हें विशेष शिक्षा दी;—बताया कि पुस्तकें किस-किस विषय की थीं और यथासम्भव यह भी कि उनके स्थायी लेनेवाले कैसे लोग थे; और यह कि अगर वापस लाई हुई पुस्तक की फीस देने के लिए संयोग से गाहक के पास फुटकल न हो तो उस दशा में किन-किन लोगों का नई पुस्तक ले जाने के लिए विश्वास कर सकते हैं; और उन लोगों के नाम के आगे छोटे-छोटे चिह्न लगाकर उसने उन व्यक्तियों के नाम सूचित किये जिनको आयन्दा लाभ उठाने देने के पहले पिछला हिसाब नक़द चुकता करा लेना होगा।

यह देखकर आश्चर्य होता था कि मि० टोलमैन इन सब बातों में कितनी दिलचस्पी ले रहे थे। जिन-जिन के विषय में वृद्धा ने बातें की थीं, उनमें से कुछ से मिलने के लिए वस्तुतः वह बहुत उत्सुक थे। उन्होंने क्रय-विक्रय और दुकान के साधारण प्रबन्ध-सम्बन्धी उसकी बताई हुई बहुत-सी बातों

में से थोड़ा-बहुत याद रखने का भी प्रयत्न किया; जो कुछ उसने बतलाया था उसमें से शायद तीन-चौथाई से अधिक वे नहीं भूले थे।

आखिरकार सौदे से सम्बन्धित दोनों व्यक्तियों के बीच सब बातें सन्तोष-प्रद रीति से तय हो गईं—यद्यपि वृद्धा के मन में ऐसी सैकड़ों बातें थीं जिन्हें करने को अब भी उसका जी चाहता था। अस्तु, एक सुहावनी बर्फ़ीली शाम को उस दरवाज़े पर से असबाब और फ़र्नीचर गाड़ी पर लद गया, और वृद्धा और उसके पुत्र ने उस अपने पुराने स्थान से विदा ली, और मि० टोलमैन उस बिसाती की दूकान और ग्राहकीय पुस्तकालय के मालिक और मैनेजर की हैसियत से वहाँ उस छोटे से कौण्टर के पीछे बैठे रह गये। जब उन्होंने इस पर सोचा तो उन्हें हँसी आ गई, लेकिन उन्होंने अपने हाथ मल लिये और बड़े सन्तोष का अनुभव किया।

"इसमें सनक की वास्तव में कोई बात नहीं है," उन्होंने अपने आप से कहा; यदि कोई ऐसी वस्तु है जिसे, अपने विचार से, मैं प्राप्त करना चाहता हूँ, और जिसे प्राप्त करने का साधन मेरे पास है, और उसमें कोई हानि भी नहीं है, तो क्यों न उसे मैं प्राप्त करूँ?"

विरुद्ध कुछ कहने के लिए वहाँ कोई था नहीं, अतः अँगीठी के आगे मि० टोलमैन ने फिर अपने हाथों को मल लिया, और तब उठकर दुकान में टहलने लगे और आश्चर्य करने लगे कि देखें उनका पहला ग्राहक कौन आता है।

बीस मिनट में ही एक छोटे से लड़के ने दरवाज़ा खोला और अन्दर आया। मि० टोलमैन झट कौण्टर के पीछे उसका आदेश जानने के लिए आ गये। लड़का दो ताव लिखने के काग़ज़ और एक लिफ़ाफ़ा चाहता था।

"किसी ख़ास क़िस्म का चाहिए ?" मि० टोलमैन ने पूछा।

लड़का नहीं जानता था कि किसी विशेष प्रकार के काग़ज़ की उसे आवश्यकता है। उसके विचार में तो जैसा वह सदैव ले जाता रहा है वैसा—वही, पर्याप्त होगा। उसने मि० टोलमैन को बड़े ग़ौर से देखा। प्रत्यक्ष था, कि वह दूकानदार के इस परिवर्तन पर आश्चर्य कर रहा था, लेकिन उसने कोई प्रश्न नहीं किया।

"मैं समझता हूँ, तुम यहाँ के पुराने ग्राहक हो," मि० टोलमैन ने काग़ज़ के कई बक्सों को, जो उन्होंने तख़्तों से नीचे उतारे थे, खोलते हुए कहा—"मैंने यहाँ अभी-अभी दूकानदारी शुरू की है, और मुझे मालूम नहीं कि तुम किस तरह का काग़ज़ खरीदते रहे हो, लेकिन, मेरे ख़याल में, इससे काम चल जायगा"; और उन्होंने सब से बढ़िया काग़ज़ के दो ताव निकाले, और उसी के साथ का एक लिफ़ाफ़ा। उन्हें एक पतले बादामी काग़ज़ के टुकड़े में होशियारी से बाँधकर उन्होंने उस लड़के को दे दिया, और उसने तीन सेंट्स उन्हें दिये। मि० टोलमैन ने उन्हें लिया और मुस्कराये, और फिर जल्दी से हिसाब लगाकर लड़के को, जो कि अभी दरवाज़ा ही खोल रहा था, आवाज़ दी और एक सेंट उसे लौटा दिया।

"तुमने इतना मुझे अधिक दे दिया था," उन्होंने कहा।

लड़के ने सेंट ले लिया, मि० टोलमैन की ओर देखा, और फिर दूकान में से यथासम्भव शीघ्र बाहर निकल गया।

"यह इतना तो बहुत अधिक नफ़ा है," मि० टोलमैन बोले; लेकिन मैं समझता हूँ कि छोटी-मोटी चीज़ों की बिक्री में सब बराबर हो जाता है। बाद को मि० टोलमैन को मालूम हुआ कि यही बात थी।

तीसरे पहर के बीच में एक या दो ग्राहक और आये; इसके बाद अन्धेरा होते-होते किताबों के लेनेवाले आने लगे। इन्होंने मि० टोलमैन को बहुत व्यस्त रक्खा। केवल दर्ज करने या खारिज करने का ही बहुत सा काम नहीं था, बल्कि अध्यक्षता में परिवर्तन-सम्बन्धी कितने ही सवालों का जवाब देना, नई पुस्तकों के मँगाने की सम्भावना, साथ ही इनकी संख्या और विषय पर इन लोगों के परामर्श, जिसमें कि मौजूदा पुस्तकों के प्रति कुछ असन्तुष्टि का भाव भी मिला रहता—इन सब बातों का उत्तर भी देना था।

हर एक को रञ्ज हुआ कि वह वृद्धा चली गई थी; किन्तु मि० टोलमैन सबों को प्रसन्न करने के लिए इतने उत्सुक थे, और इतने प्रसन्नचित्त थे, और उनकी पुस्तकें चुनने में ऐसी दिलचस्पी ले रहे थे, कि सिर्फ़ एक ही ग्राहक ऐसा दिखाई दिया जिसे इस परिवर्तन से हार्दिक दुःख हुआ था। वह एक नवयुवक था जिसके नाम पिछले हिसाब के तेंतालीस सेंट्स पड़े थे। वह बहुत देर तक एक किताब छाँटता रहा, और अन्त में जब वह उसे मि० टोलमैन के पास दर्ज कराने को लाया, तो उसने गिरी हुई आवाज में कहा कि "मैं आशा करता हूँ मेरा हिसाब कुछ थोड़े समय तक और चलता रहने देने में आपको कोई आपत्ति न होगी। महीने की पहली तारीख को मैं इसे चुकता कर दूँगा; और उसके बाद फिर जब कभी किताब लेकर आऊँगा तो मुझे आशा है कि नक़द देने में समर्थ होऊँगा।"

मि० टोलमैन ने वृद्धा की फ़ेहरिस्त में उसका नाम देखा और उसके सामने कोई चिह्न न पाकर कहा, "अच्छी बात है, महीने की पहली तारीख बहुत ठीक रहेगी।" वह नवयुवक नये लायब्रेरियन से पूर्णतः सन्तुष्ट होकर चला गया। इस प्रकार मि० टोलमैन ने अपनी सर्व-प्रियता बढ़ानी शुरू की।

जैसे-जैसे शाम अधिक होने लगी, उन्हें भूख और जोर से सताने लगी; लेकिन दूकान बन्द कर देना उन्होंने पसन्द नहीं किया, क्योंकि कोई न कोई अब तक आ ही टपकता था, कभी यह पूछने के लिए कि कितने बजे हैं, और कोई छोटा-मोटा सौदा ही लेने के लिए। उस पर, अभी पुस्तकालय के पाठक भी थोड़ी-थोड़ी देर बाद आते ही जा रहे थे।

तथापि, ग्राहकों से थोड़ी देर को छुट्टी मिलने पर साहस पाकर उन्होंने खिड़कियाँ बन्द कीं, दरवाजों में ताला लगाया, और जल्दी से एक होटल की ओर लपक गये, जहाँ पर उन्होंने अपना वह भोजन ग्रहण किया जिसे प्राप्त करने की बात छोटे-मोटे दूकानदार शायद ही कभी सोच सकें।

दूसरे दिन प्रातःकाल मि० टोलमैन ने अपना नाश्ता स्वयं तैयार किया। इसमें बड़ा आनन्द आया। उन्होंने देखा था कि कैसे वृद्धा ने आराम के साथ पीछे के छोटे कमरे में अपने खाने की मेज डाल रक्खी थी, जहाँ इच्छानुसार कोई भी चीज बनाने के लिए एक उपयुक्त अँगीठी थी। और इस प्रकार के भोजन के आनन्द के वह आकांक्षी भी थे। घर में रसद का सामान काफी था, जिसे उन्होंने बाकी सामान के साथ ही खरीद लिया था। बाहर जाकर वह अपने लिए एक ताजी रोटी खरीद लाये। फिर उन्होंने सूअर के मांस का एक टुकड़ा भूना, खूब अच्छी तेज थोड़ी चाय बनाई, कुछ अण्डे उबाले, और फिर छोटी गोल मेज पर अपना नाश्ता किया। यद्यपि यह बिल्कुल सादा था, पर अपने क्लब के उन सब नाश्तों से उन्हें इसमें इतना अधिक मजा आया कि जिसकी उन्हें कभी याद भी हो! दूकान उन्होंने खोल दी थी, और शीशेदार दरवाजों के सामने लगभग यही आशा करते हुए बैठे थे कि उनके भोजन में कोई बाधा उपस्थित हो। इस प्रकार की

दूकानदारी में ऐसी बाधा कितनी उपयुक्त जँचती है, जिसमें कि बीच में उन्हें उठकर जाना और एक ग्राहक का आदेश पालन करना पड़े।

शाम होने से पूर्व ही उस दिन मि० टोलमैन को निश्चय हो गया कि अपनी अनुपस्थिति में दुकान का काम देखने के लिए उन्हें शीघ्र किसी लड़के या किसी आदमी को रखने के लिए विवश होना पड़ेगा। नाश्ते के बाद एक औरत, जिसकी सिफ़ारिश वृद्धा कर गई थी, बिस्तरा ठीक करने तथा मामूली सफ़ाई करने के लिए आई, लेकिन उसके चले जाने के बाद वह अपनी दूकान में अकेले रह गये। उन्होंने निश्चय कर लिया कि अपने इस दायित्व के कारण वह अपने स्वास्थ्य को हानि नहीं पहुँचने देंगे। अस्तु, एक बजे उन्होंने निश्चयपूर्वक दूकान का दरवाजा बन्द किया और दोपहर का खाना खाने चले गये।

वे उम्मीद किये हुए थे कि उनकी अनुपस्थिति में कोई न आयेगा, लेकिन जब वे लौटे तो एक छोटी लड़की को बर्तन लिये हुए दरवाजे पर खड़ा पाया। वह आधा पाइण्ट दूध उधार लेने आई थी।

"दूध !" मि० टोलमैन ने साश्चर्य कहा, "अरी बच्ची, मेरे पास दूध तो नहीं है। मैं तो इसका उपयोग चाय में भी नहीं करता !"

छोटी लड़की बहुत निराश सी दिखाई पड़ी, "क्या मिसेज वाकर बिल्कुल ही चली गईं ?" उसने पूछा।

"हाँ," मि० टोलमैन ने उत्तर दिया, "लेकिन यदि मेरे पास दूध होता तो मैं तुम्हें उतनी ही ख़ुशी से उधार देता जितनी ख़ुशी से वे दे सकतीं। यहाँ पास में ऐसा कोई स्थान है जहाँ से तुम दूध मोल ले सकती हो ?"

"हाँ, हाँ", लड़की ने कहा, "मण्डी में आपको मिल सकता है।"

"आधा पाइण्ट का कितना दाम होगा?" उन्होंने पूछा।

"तीन सेंट्स," लड़की ने उत्तर दिया।

"अच्छा तो" मि० टोलमैन ने कहा, "यह तीन सेंट्स हैं। जाओ, मेरी तरफ़ से दूध मोल लेकर उधार ले जा सकती हो। —ठीक होगा न?"

लड़की के विचार से बिल्कुल ठीक था; अतः एकदम वह चल दी।

इस ज़रा सी घटना में भी मि० टोलमैन को आनन्द आया। यह कितनी अभिनव घटना थी! जब शाम को वे भोजन करके लौटे तो उन्होंने पुस्तकालय के दो पाठकों को दरवाज़े की सीढ़ी पर पैर घिसते हुए पाया, और बाद में सुना कि और भी कई लोग आकर लौट गये थे। भोजन के समय अगर वे धन्धा बन्द करेंगे तो निःसन्देह इससे पुस्तकालय को हानि पहुँचेगी। अगर वह एक लड़का रखने के लिए विज्ञापन देना चाहते तो सौ-एक लड़कों में वह किसी को भी आसानी से चुन लेते, पर वह इस स्थान पर एक छोकरा रखने में हिचकते थे। इससे उनकी सुख-सुविधा और उनके अनुभव में बड़ी बाधा पड़ती। कहीं उन्हें एक ऐसा लड़का मिल सकता, जो स्कूल जाता होता, और काफ़ी पारिश्रमिक मिलने पर दोपहर को और सन्ध्या समय उनके यहाँ आने को राज़ी हो जाता! लेकिन ऐसे लड़के को बहुत नियमित और दायित्वपूर्ण होना होगा।—कुछ करने से पहले वे इस बारे में अच्छी तरह सोच लेंगे।

उन्होंने एक या दो दिन इस पर विचार किया, लेकिन सारा समय इसी की चिन्ता में नहीं बिताया। जब कोई ग्राहक न होता, तो वे दूकान के ठीक ऊपरवाले उस बड़े कमरे में टहलते

रहते, जिसमें अनोखे क़िस्म का पुराना फ़र्नीचर पड़ा था; दीवारों पर अजीब से नमूने के छापे थे; उसकी कार्निसों पर एक बेतुकी सजावट थी। दूसरे छोटे-छोटे कमरे भी उन्हें ऐसे ही हास्यास्पद मालूम होते; जब दूकान के दरवाज़े की घण्टी इन वस्तुओं के मनन से उन्हें छुड़ाकर नीचे बुलाती, तब उन्हें अच्छा न लगता। इस विचार से उन्हें सुख होता कि यह सब अजीब-अजीब वस्तुएँ उन्हीं की हैं। दूकान की विभिन्न वस्तुओं की मिल्कियत से भी उनको एक ऐसे सुख का अनुभव होता जैसा कि अपनी अन्य धन-सम्पत्ति से उन्हें कभी नहीं हुआ था। यह सब कितना विचित्र और अपूर्व था।

पुस्तकालय में किताबों का निरीक्षण करना वह बहुत पसन्द करते थे। उनमें बहुत से ऐसे पुराने उपन्यास थे, जिनके नाम से तो वे काफ़ी परिचित थे, लेकिन जिन्हें उन्होंने कभी पढ़ा नहीं था। उन्होंने निश्चय किया कि जब वे अपने आपको स्थिरचित्त और निश्चिन्त पायेंगे, तो इनमें से कुछ पुस्तकें अवश्य पढ़ेंगे।

जिस रजिस्टर में ग्राहकों के नाम और उनका हिसाब लिखा जाता था, मनोविनोद के लिए उसे देख-देखकर वे आश्चर्य कर रहे थे कि जो कुछेक ख़ास किताबों को ले गये हैं वे कैसे लोग होंगे। अब, जैसे, 'बिल्लियों की किताब' को कौन पढ़ना चाहता होगा? और 'उड़ाल्फ़ो के रहस्य' पढ़ने की परवा सम्भवतः किसे हुई होगी! पर जिसके विषय में मि० टोलमैन को सबसे अधिक उत्कण्ठा हुई वह अज्ञात व्यक्ति एक ग्राहक था जिसके अधिकार में इस समय डॉमेस्टाक-रचित 'सङ्गीत-स्वरारोहण के गुणात्मक प्रयोग' नामक पुस्तक थी।

"यह दुनिया में कैसे सम्भव हो गया" मि० टोलमैन बोल उठे, "कि ऐसी पुस्तक इस पुस्तकालय में आ गई; और संसार में वह व्यक्ति कहाँ से निकल आया जिसकी इच्छा इसको पढ़ने

ले जाने की हुई।—और ले जाने की ही नहीं," पुस्तक का ब्योरा देखते हुए वे कहते गये, "बल्कि उसने आकर इसे दो, तीन, चार—नौ बार अपने नाम दर्ज कराया है! अठारह हफ़्ते से है यह किताब उसके पास!"

बिना कुछ ठीक-ठीक निश्चय किये मि० टोलमैन ने उस समय तक के लिए एक सहायक रखने की बात स्थगित कर दी, जब तक कि पी० ग्लासकौ, यानी वह व्यक्ति जिनका यहाँ ज़िक्र है, आकर दर्शन नहीं देते। पुस्तक को फिर वापिस लाने का समय भी क़रीब-क़रीब आ पहुँचा था।

"अगर अभी एक छोकरा मैंने रख लिया", मि० टोलमैन ने सोचा, "तो यह निश्चय है कि ग्लासकौ मेरी अनुपस्थिति में ही पुस्तक लौटाने आये।"

पुस्तक के अन्तिम बार दर्ज करा जाने की तारीख़ से लगभग ठीक दो हफ़्ते बाद पी० ग्लासकौ आया। तीसरे पहर के बीच का समय था। मि० टोलमैन अकेले थे। सङ्गीत-दर्शन का यह अन्वेषक लगभग तीस वर्ष की अवस्था का एक शान्त युवक था। वह एक हलका भूरा लबादा ओढ़े था, और उसकी एक बग़ल में वह बृहत् ग्रन्थ था।

ग्लासकौ ने जब पुस्तकाध्यक्ष के परिवर्तन के विषय में सुना, तो चकित हुआ; तथापि उसने यह आशा प्रकट की कि उस पुस्तक के, जिसे वह कुछ समय पूर्व ले गया था, दुबारा दर्ज कराने में कोई आपत्ति न होगी।

"नहीं, नहीं," मि० टोलमैन ने कहा—"बिल्कुल नहीं। वास्तव में मैं तो नहीं सोचता कि पाठकों में कोई और भी ऐसा होगा जिसे इसकी ज़रूरत होगी। मुझे यह देखने की उत्सुकता हुई थी कि देखूँ यह पुस्तक और भी कभी बाहर गई है या नहीं, और मैंने देखा, कभी नहीं गई।"

नवयुवक धीरे से मुस्कराया। "हाँ," उसने कहा—"मुझे भी आशा नहीं, हर एक आदमी सङ्गीत-विषयक ऊँचे गणित के अध्ययन की ओर नहीं झुकता, और विशेषतया जब उसका विवेचन डॉर्मस्टाक के ढङ्ग पर किया गया हो।"

"मालूम होता है वह इस विषय में बहुत गहरा जाता है," मि० टौलमैन ने, जिन्होंने पुस्तक उठा ली थी, अपनी राय प्रकट की; "इसके गणित वृत्तों और त्रिकोणों आदि को देखकर तो मुझे कम से कम यही कहना चाहिए।"

"बेशक, गहरा जाता है," ग्लासकौ ने कहा, "और यद्यपि कुछ महीनों से यह पुस्तक मेरे पास है, और मुझे अधिकांश लोगों की अपेक्षा अधिक समय पढ़ने के लिए मिलता है, लेकिन मैं केवल ५९वें पृष्ठ तक ही पहुँच सका हूँ; बल्कि मुझे सन्देह है कि इसका कुछ भाग मुझे कहीं दुहराना न पड़े—इसके पूर्व कि मैं जानूँ कि मैं पूर्णतया इसे समझता हूँ।"

"और कुल मिलाकर ये ३४० पृष्ठ हैं!" मि० टौलमैन ने सहानुभूतिपूर्वक कहा।

"हाँ," उत्तर में दूसरे ने कहा, "लेकिन मुझे विश्वास है, ज्यों-ज्यों मैं आगे बढ़ता जाऊँगा, विषय सरल होता जायगा। मैंने जो कुछ अभी तक पढ़ा है उससे मुझे ज्ञात हो गया है।"

"आपने कहा कि आपके पास समय काफी रहता है," मि० टोलमैन ने पूछा, "आज-कल सङ्गीत-व्यवसाय कुछ मन्दा है क्या?"

"ओह, मैं सङ्गीत का व्यवसायी नहीं हूँ," ग्लासकौ ने कहा, "सङ्गीत से मुझे बड़ा प्रेम है, और मैं चाहता हूँ कि इसे अच्छी तरह समझ जाऊँ। लेकिन व्यवसाय मेरा बिल्कुल दूसरा है। मैं रात को औषधियाँ बेचता हूँ, इसी लिए मुझे पढ़ने को इतना समय रहता है।"

"रात को औषधियाँ बेचते हैं!" मि० टोलमैन ने प्रश्न के से दुहराया।

"जी, हाँ," दूसरे ने कहा, "मैं नीचे शहर में एक बड़े औषधालय में काम करता हूँ, जो रात भर खुला रहता है; जब दिन के क्लर्कों की छुट्टी हो जाती है, तब मैं काम पर जाता हूँ।"

"तो क्या इसी से आपको अधिक अवकाश मिलता है?" मि० टोलमैन ने पूछा।

"स्पष्ट तो है," ग्लासको ने उत्तर दिया, "मैं क़रीब दोपहर तक सोता हूँ, और तब शाम के ७ बजे तक, शेष दिन भर मुझे बचता है। मैं समझता हूँ कि जो लोग रात में काम करते हैं, वे दिन में काम करनेवालों की अपेक्षा अपने समय का अधिक सन्तोष-प्रद रूप से उपयोग कर सकते हैं। गर्मियों में अगर मैं चाहूँ तो रोज़ नदी की सैर कर सकता हूँ, या शहर के बाहर कहीं घूम आ सकता हूँ।"

"दिन का प्रकाश बहुत से कामों के लिए अधिक उपयुक्त है, यह सच है," मि० टोलमैन ने कहा, "लेकिन रात भर औषध-भण्डार में अकेले बैठा रहना क्या भयावना-सा नहीं लगता? रात को दवा मोल लेने आनेवाले अधिक नहीं हो सकते। मैं तो समझता था कि आम तौर से दवाख़ानों में एक रात को उठानेवाली घण्टी होती होगी, जिससे यदि कोई कुछ चाहता है, तो कम्पौण्डर को जगा देता होगा।"

"हमारी दुकान में रात को बहुत अकेला-सा नहीं लगता," ग्लासको ने कहा, "सच तो यह है कि वहाँ अक्सर दिन की अपेक्षा रात में और अधिक चहल-पहल रहती है। देखिए न, हम लोग ठीक समाचारपत्रों के आफ़िसों के बीच में रहते हैं; और कोई न कोई हमेशा सोडावाटर के लिए, सिगार के लिए, या और-और चीज़ों के लिए आता ही रहता है। हमारा भण्डार

सम्पादकों और संवाददाताओं के लिए आकर बैठने तथा गप-शप करने और गर्म-गर्म सोडा पीने के लिए एक बड़ी सुखद गर्म जगह है। और जब छपने के लिए अख़बार प्रेस में जाने शुरू हो जाते हैं, तो हमारे यहाँ अँगीठी के चारों ओर आकर जरूर उनका एक गुट्ट जमा हो जाता है। और, जनाब, यह मैं आपसे कहता हूँ, कि बड़े मजे की मण्डली है उनकी। अपने जीवन में सुनी हुई कुछ सर्वोत्तम कहानियाँ मैंने सुबह के तीन-तीन बजे अपने उसी स्थान में सुनी हैं।"

"विचित्र जीवन है!" मि० टोलमैन बोले, "आप जानते हैं, मैंने कभी नहीं सोचा था कि लोग इस प्रकार भी अपना मनोरञ्जन करते हैं!—और तिस पर रात-रात भर, रोज, जैसा कि मैं अनुमान करता हूँ।"

"हाँ, जनाब, रात-रात भर, रोज; एतवार-वेतवार सब!"

अब रात के दवा-फ़रोश ने अपनी किताब उठाई।

"घर जा रहे हैं पढ़ने?" मि० टोलमैन ने पूछा।

"सो तो—नहीं;" उसने उत्तर दिया, "आज इस पहर तो ज़रा पढ़ने के लिए ठण्डा है। सोचता हूँ, तेज क़दम टहलने के लिए निकल जाऊँ।"

"लौटकर आने तक आप अपनी किताब छोड़े नहीं जा सकते?" मि० टोलमैन ने पूछा, "यानी अगर आप इसी रास्ते लौटकर आयें, तो। साथ ले जाने में यह किताब एक बोझ रहेगी।"

"आऊँगा; धन्यवाद," ग्लासको ने कहा, "इसी रास्ते लौट-कर आऊँगा।"

जब वह चला गया तो मि० टोलमैन ने पुस्तक उठाई, और पहले की अपेक्षा उसे अधिक ध्यान से देखने लगे। पर उनका यह निरीक्षण देर तक नहीं चला।

"कैसे कोई समझदार व्यक्ति इस तरह की पुस्तकों में दिलचस्पी ले सकता है, यह मेरी समझ से बाहर है।"

जब ग्लासकौ लौटकर आया तो मि० टोलमैन ने उससे रुक जाने और अपने आपको गर्मा लेने के लिए कहा। और थोड़ी देर तक जब उन्होंने बातें कीं, तो मि० टोलमैन को भूख लगने लगी। उनको जाड़ों की भूख थी; और दोपहर को उन्होंने जल्दी ही खा लिया था। दवाफ़रोश से, जिसने कि अपना 'डॉर्मस्टाक' खोल लिया था, उन्होंने कहा, "आप यहाँ बैठना और थोड़ी देर पढ़ना कैसा पसन्द करेंगे; इस बीच मैं जाऊँ और भोजन कर आऊँ ? मैं गैस जला दूँगा, और, अगर कोई जल्दी नहीं है, तो आप ख़ूब आराम से यहाँ बैठिए।"

ग्लासकौ को बिल्कुल कोई जल्दी नहीं थी; और गर्म आँच के सामने बैठकर शान्तिपूर्वक कुछ अध्ययन करने में उसको बहुत ख़ुशी थी। अस्तु, मि० टोलमैन निश्चिन्त भाव से यह सोचते हुए, कि जिसको वृद्धा महिला ने एक ही पुस्तक नौ बार उधार दे दी वह मनुष्य अवश्य ही विश्वास का पात्र होगा, उसे वहीं छोड़ गये।

जब मि० टोलमैन वापिस आये, तो कोने में उस छोटी सी अँगीठी के पास बैठकर दोनों में कुछ देर तक और बातें होती रहीं।

"इससे बड़ी अड़चन होती होगी," रात के दवाफ़रोश ने कहा कि, "आप बिना दूकान बन्द किये खाना खाने नहीं जा सकते। अगर आप चाहें," उसने एक प्रकार से हिचकते हुए कहा, "तो मैं क़रीब इसी समय तीसरे पहर यहाँ आ जाया करूँगा, और जब आप खाना खाने जाते हैं, यहाँ रुक जाया करूँगा। जब तक आप कोई सहायक न रख लें, मैं ख़ुशी

से यह कार्य कर दूँगा। अधिकांश लोग जो आते हैं उन्हें मैं देख सकता हूँ। बाक़ी प्रतीक्षा कर सकते हैं।"

मि० टोलमैन तो इस प्रस्ताव पर उछल पड़े। यह तो ठीक वैसा था जैसा कि वह चाहते थे।

अतएव पी० ग्लासकौ प्रतिदिन तीसरे पहर आ जाया करते और जब मि० टोलमैन खाना खाने चले जाते तो यह 'डॉर्मस्टाक' पढ़ा करते। और बहुत अर्सा नहीं बीता कि वह दोपहर के खाने के समय भी आने लग गये। उन्होंने कहा कि "मेरी सुविधा में इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। नाश्ता ख़त्म करने के बाद थोड़ा पढ़ने की इच्छा होती ही है।" अपने मन में मि० टोलमैन को लगा कि रात के दवाफ़रोश का निवासस्थान शायद अच्छी तरह गर्म नहीं रहता; तीसरे पहर की ठण्डक में पढ़ने की अपेक्षा टहल लेने की इच्छा का भाव भी इसी बात से स्पष्ट हो गया। ग्लासकौ का नाम निःशुल्क जनों की सूची में चढ़ा लिया गया, और 'डॉर्मस्टाक' को वह रोज़ रात के लिए ले जाने लगे, क्योंकि सबेरा होते-होते जब दूकान का व्यापार मन्दा पड़ने लगता, उस समय उन्हें पढ़ने का मौक़ा मिल सकता था।

एक दिन दोपहर के बाद दूकान में एक युवती महिला आई, जो दो किताबें वापिस लाई थी। इन्हें कि वह एक महीने से अधिक रख चुकी थी। नियत समय से अधिक दिन किताबें रखने का उसने कोई बहाना नहीं पेश किया, केवल चुपचाप उन्हें लौटा दिया और जुर्माना अदा कर दिया। मि० टोलमैन को यह पैसा लेना अच्छा नहीं लगा, क्योंकि इस क़िस्म का पैसा वह पहली ही बार ले रहे थे; लेकिन वह युवती उन्हें लगती थी मानो नियत समय से अधिक दिन तक किताबें रखने की नवाबी में बिल्कुल समर्थ थी; और व्यवसाय तो फिर

व्यवसाय था। इसलिए गम्भीरतापूर्वक उन्होंने उसे शेष फुटकल लौटा दिया। इसके पश्चात् उसने कहा कि डॉमेस्टाक की 'सङ्गीत-स्वरारोहण के गुणात्मक प्रयोग' ले जाने की उसकी इच्छा है।

मि० टोलमैन उसे आँख फाड़कर देखने लगे। वह एक भव्य, सुन्दर नवयुवती थी और मालूम होता था कि बड़ी समझदार है। किन्तु उन्होंने कह दिया कि किताब बाहर गई हुई है।

"बाहर!" वह बोल उठी—"बस, यह तो हमेशा बाहर ही रहती है। मुझे बड़ा विचित्र लगता है कि इस किताब की इस क़दर माँग हो। मैं उसे कितने अर्से से पाने की कोशिश कर रही हूँ।"

"विचित्र अवश्य है", मि० टोलमैन ने कहा, "लेकिन उसकी माँग निश्चय ही ऐसी है। क्या मिसेज़ वाकर ने आपसे उसके बारे में कभी कोई वादा किया था?"

"नहीं," वह बोली, "लेकिन मैं समझती थी कि मेरी बारी कभी तो आयेगी ही। और मुझे विशेषकर आज अभी इस किताब की जरूरत है।"

मि० टोलमैन कुछ फेर में पड़ गये। वह जानते थे कि रात के दवाफ़रोश को किताब पूर्णतः न अपना लेनी चाहिए, लेकिन जो व्यक्ति उनके इतने काम का था, और जो उस किताब में इतनी सच्ची दिलचस्पी लेता था, उस पर किया हुआ इतना एहसान वह वापिस नहीं लेना चाहते थे। और वह उस युवती को यह कहकर सन्तोष भी नहीं दे सकते थे कि उनके विचार से वह पुस्तक जल्दी लौट आयेगी। वह जानते थे, वह जल्दी लौटेगी नहीं। उसमें ३४० पृष्ठ थे। अस्तु, उन्होंने केवल इतना ही कहा कि अफ़सोस है।

"मुझको भी है," युवती ने कहा, "बहुत अफ़सोस है। बात यह है कि वह पुस्तक पढ़ने के लिए मुझे इस समय एक अनोखा अवसर मिला है, जो फिर नहीं मिल सकेगा।"

मि० टोलमैन के मुख पर सहानुभूति का कुछ ऐसा भाव था, कि युवती का उनमें विश्वास बढ़ गया। वह कहती गई—"मैं एक अध्यापिका हूँ," उसने कहा—"और कुछ विशेष कारणों से मुझे एक महीने की छुट्टी मिल गई है; जो कि मैं चाहती थी क़रीब-क़रीब सभी सङ्गीत के अध्ययन में लगा देती, और विशेष कर मैं 'डॉर्मस्टाक' पढ़ना चाहती थी। क्या आप समझते हैं कि उसके जल्दी लौट आने की सम्भावना है? और क्या इसे आप मेरे नाम पहले से अलग कर रक्खेंगे?"

"अलग कर रक्खेंगे।" मि० टोलमैन बोले—"मैं अवश्य कर रक्खूँगा।" इसके बाद एक-दो सेकण्ड तक वह सोचते रहे। "अगर आप परसों यहाँ आयें तो मैं आपको निश्चय रूप से कुछ बता सकूँगा।"

उसने कहा—"आऊँगी"।

अगले दिन दोपहर को भोजन के समय मि० टोलमैन बहुत देर बाहर रहे। डॉर्मस्टाक की महान् कृति उन्हें मिल सकती है या नहीं, यह देखने के लिए वह सभी बड़े-बड़े पुस्तक-भण्डारों में गये, लेकिन सफलता नहीं मिली। पुस्तक-विक्रेताओं ने उन्हें बताया कि पुरानी किताबों की किसी दूकान में मिल जाय तो मिल जाय, नहीं तो कोई सम्भावना नहीं है कि देश भर में वह किताब कहीं मिल सके। उस पुस्तक की बिल्कुल माँग नहीं थी, और यदि उन्होंने उसे इँगलैण्ड से मँगाया भी, जहाँ से कि वह प्रकाशित हुई थी, तो भी सम्भव नहीं कि वह मिल जाय; क्योंकि बहुत समय से उसका प्रकाशन बन्द हो चुका था।

दूसरे दिन वे कई पुरानी पुस्तकों के भण्डार में गये लेकिन डॉर्मेस्टाक उन्हें कहीं नहीं मिल सकी।

जब वे लौटकर आये तो उन्होंने ग्लासकौ से इस विषय की चर्चा की। ऐसा करते हुए उन्हें अफ़सोस हो रहा था, लेकिन उन्होंने सोचा कि स्पष्ट न्याय के कारण यह बात खोलने के लिए वह विवश हैं। किसी अन्य व्यक्ति को उसकी प्यारी पुस्तक की आवश्यकता है, यह सूचना पाकर दवाफ़रोश चिन्ताकुल हो उठा।

"एक स्त्री!" आश्चर्य से उसने कहा, "वाह, वह तो सारी पुस्तक में से दो पृष्ठ भी नहीं समझ पायेगी! यह बहुत बुरा हुआ। मैं नहीं कल्पना करता था कि यह पुस्तक कोई लेना चाहेगा!"

"इतना अधिक परेशान न हूजिए," मि० टोलमैन ने कहा, "मेरा निश्चय तो नहीं कहता कि यह पुस्तक आपको छोड़नी ही पड़ेगी।"

"आपको यह कहते सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई," ग्लासकौ ने कहा, "इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है कि यह उसका क्षणिक आकर्षण मात्र है। मैं तो जोर देकर कहता हूँ कि दर-असल इसकी अपेक्षा वह एक अच्छा-सा नया उपन्यास लेना अधिक पसन्द करेगी।" और तब यह सुनकर कि उसी तीसरे पहर वह युवती आनेवाली है, वह डॉर्मेस्टाक को बग़ल में दबाकर टहलने निकल गया।

जब एकाध घण्टे के बाद वह महिला आई, तो किसी भी नये उपन्यास से उसे बिल्कुल सन्तोष नहीं होता था। उसको यह देखकर सचमुच ही बड़ा अफ़सोस था कि उसकी प्रतीक्षा पूरी करने के लिए 'सङ्गीत-स्वरारोहण के गुणात्मक प्रयोग' की प्रति वहाँ नहीं है। मि० टोलमैन ने बताया कि उन्होंने उस पुस्तक की दूसरी प्रति भी खरीदने की कोशिश की थी; इसके लिए

उक्त महिला ने कृतज्ञता का भाव दर्शाया। वह इतना भी कहने पर विवश हो गये कि पुस्तक एक ऐसे महाशय के अधिकार में है जो कुछ समय से—वस्तुतः पुस्तक के बाहर जाने की तिथि से ही—उसे अपनाये हुए हैं, किन्तु अभी तक समाप्त नहीं कर पाये हैं।

वह युवती इस पर, जान पड़ा, कुछ चिढ़ सी गई।

"क्या यह नियम के विरुद्ध नहीं है कि कोई साहब एक किताब को इतने दिनों तक अपने पास रक्खे रहें?" उसने पूछा।

"नहीं," मि० टोलमैन ने कहा, "मैंने इस सम्बन्ध में देख लिया है। हमारे नियम बड़े सरल हैं और केवल इतना कहते हैं कि कोई पुस्तक एक निश्चित फ़ीस देकर दुबारा अपने नाम से दर्ज कराई जा सकती है।"

"तो फिर वह मुझे कभी नहीं मिलेगी?" युवती ने कहा।

"नहीं, मैं तो इस बारे में निराश नहीं होऊँगा," मि० टोलमैन ने कहा। "इस विषय पर उन्हें सोचने का अवसर नहीं मिला है। वह समझदार आदमी हैं। और मुझे विश्वास है कि वह कुछ समय के लिए अपना अध्ययन स्थगित कर देंगे और आपको पुस्तक लेने देंगे।"

"नहीं," उसने कहा, "ऐसा मैं नहीं चाहती। अगर वह, जैसा कि आप कहते हैं, इसका अध्ययन रात-दिन कर रहे हैं, तो मैं बाधा डालना नहीं चाहती। मुझे तो वह पुस्तक कम से कम एक महीने के लिए चाहिए; और इससे, मैं सोचती हूँ, उनका अध्ययन बिल्कुल उखड़ जायगा। लेकिन मैं नहीं समझती कि क्यों एक ग्राहकों के पुस्तकालय में किसी को ऐसी पुस्तक का अध्ययन आरम्भ करना चाहिए जिसे समाप्त करने में उसे पूरा एक साल लग जाय। क्योंकि, जैसा आपने कहा है,

उसके अनुसार यह सज्जन कम से कम उतना समय तो डॉर्मस्टाक को समाप्त करने में लगायेंगे।" अस्तु, वह चली गई।

जब पी० ग्लासको ने सन्ध्या समय यह सब सुना तो वे बहुत गम्भीर हो गये। वह काफी कुछ सोचते रहे थे, यह स्पष्ट था।

"यह उचित नहीं है," उन्होंने कहा, "मुझे पुस्तक इतने अर्से तक नहीं रखनी चाहिए। मैं इसे अब कुछ समय के लिए छोड़े देता हूँ। अब वह आवें तो आप उन्हें ले जाने दीजिएगा।" इसके बाद डॉर्मस्टाक को उन्होंने कौंटर पर रख दिया, और जाकर अँगीठी के पास बैठ रहे।

मि० टोलमैन को इससे दुःख हुआ। वे जानते थे कि दवाफ़रोश ने ठीक ही किया, फिर भी उन्हें उसके लिए अफ़सोस हो रहा था। "आप क्या करेंगे?" उन्होंने पूछा, "अपना अध्ययन बन्द कर देंगे?"

"नहीं, नहीं," ग्लासको ने अँगीठी की ओर गम्भीर मुद्रा से देखते हुए कहा। "मैं रागों के स्वरारोह पर कुछ दूसरी पुस्तकें शुरू कर दूँगा, जो कि मेरे पास हैं; और जब तक यह महोदया इस किताब से ऊब नहीं जातीं, मैं इस प्रकार, इस विषय पर अपने विचार ताजा रक्खूँगा। मुझे सचमुच विश्वास नहीं कि वह इसे अधिक समय तक पढ़ेंगी।" फिर इतना और कहा, "अगर आपके लिए इसमें कोई अन्तर नहीं, तो जब तक आपको कोई स्थायी सहायक नहीं मिल जाता, मैं रोज यहाँ आ जाया करूँगा और पढ़ा करूँगा, जैसा कि मैं करता रहा हूँ।"

मि० टोलमैन ने कहा, उनके आते रहने से उन्हें बड़ी खुशी होगी। उन्होंने अपना सहायक रखने का विचार बिल्कुल त्याग दिया था; लेकिन यह उन्होंने प्रकट नहीं किया।

कुछ समय बीत जाने पर वह महिला लौटी। मि० टोलमैन डर रहे थे कि अब वह बिल्कुल नहीं आयेगी। लेकिन वह आई और मिस बरनी की 'एवलीना' नामक पुस्तक माँगी। जब उसने पुस्तक का नाम लिया, तो वह मुस्कराई और कहा कि उसको विश्वास था कि अन्त में उसे एक उपन्यास ही लेना पड़ेगा और इस पुस्तक को पढ़ने की इच्छा उसकी हमेशा से थी।

"अगर मैं आपकी जगह होता तो उपन्यास कभी न लेता।" मि० टोलमैन ने कहा, और विजय-भावना के साथ उन्होंने डॉर्मिस्टाक को निकालकर युवती के आगे रख दिया।

वह प्रत्यक्ष ही बहुत प्रसन्न हुई, लेकिन जब उन्होंने मि० ग्लासकौ के सज्जनोचित व्यवहार का जिक्र किया तो उसके चेहरे का भाव तुरन्त बदल गया।

"नहीं, कदापि नहीं," उसने पुस्तक को नीचे रखते हुए कहा; "मैं उनका अध्ययन तोड़ना नहीं चाहती। यदि आप कृपा करें तो मुझे 'एवलीना' दे दीजिए।"

चूँकि मि० टोलमैन के समझाने-बुझाने का उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ, वह मिस बरनी का उपन्यास ही अपने बालदार आस्तीन में दबाये हुए चली गई।

मि० टोलमैन ने ग्लासकौ से शाम को कहा, "तो अब आप ही इस किताब को ले जायँ। वह तो नहीं ले जायगी।"

लेकिन ग्लासकौ ऐसा कुछ भी करने को तैयार नहीं था। अँगीठी की ओर देखते हुए बैठकर उसने कहा, "नहीं, जब मैंने कहा था कि मैं उसे किताब ले जाने दूँगा तो मेरा मतलब था कि वह ले जाय। जब वह देखेगी कि यह पुस्तकालय में लगातार पड़ी है, तो वह इसे आप ले जायगी।"

यह ग्लासकौ का भ्रम था। वह उसे नहीं ले गई। वह समझे हुए थी कि ग्लासगौ शीघ्र इस निष्कर्ष पर पहुँच जायगा

कि व्यर्थ आल्मारी में पड़ा रहने देने की अपेक्षा उसे लेकर पढ़ना उससे कहीं अच्छा होगा।

"दोनों के ही लिए बहुत अच्छा हो", मि० टोलमैन ने अपने मन में कहा, "अगर कोई व्यक्ति आकर यह पुस्तक ले जाय।" लेकिन उनके ग्राहकों में और कोई भी ऐसा नहीं था जो ऐसी चीज़ को ले जाने की कल्पना भी कर सकता।

खैर, एक दिन वह महिला आई, और वही पुस्तक देखनी चाही। उसने, किताब को देते समय मि० टोलमैन की प्रसन्नता को लक्ष्य करके, कहा, "आप यह मत सोचिए कि मैं इसे लेने जा रही हूँ। मैं केवल यह देखना चाहती हूँ कि यह लेखक उस विषय में क्या कहता है जिसे मैं इन दिनों पढ़ रही हूँ।" अतः वह अँगीठी के पास उस कुर्सी पर बैठ गई, जो उसके लिए मि० टोलमैन ने रख दी थी, और 'डॉर्मेस्टाक' को खोला।

लगभग आधे घण्टे तक, या कुछ ज्यादा, वह उस पुस्तक पर ध्यान जमाये रही। और तब उसने ऊपर नज़र उठाकर देखा और कहा, "सचमुच मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि इस अंश का क्या मतलब है। कष्ट के लिए क्षमा कीजिए, लेकिन मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी यदि इस इतने टुकड़े के अन्तिम भाग की आप व्याख्या कर दें।"

"मैं!" आश्चर्य के साथ मि० टोलमैन ने कहा, "यह तो, भली आप श्रीमतीजी—नहीं, कुमारी जी—यह तो, प्राण देकर भी मैं नहीं समझा सकूँगा। लेकिन क्या पृष्ठ है?" उन्होंने घड़ी देखते हुए कहा।

"पृष्ठ २४" युवती ने उत्तर दिया।

"ओह, तब तो फिर ठीक है।" उन्होंने कहा, "अगर आप १० या १५ मिनट रुक सकें तो वे महाशय, जिनके पास यह पुस्तक पहले रही है, यहीं आ जायँगे और मैं समझता हूँ

कि वे इस पुस्तक के पहले भाग में किसी भी चीज को समझा सकते हैं।"

युवती हिचकिचाती हुई सी जान पड़ी कि प्रतीक्षा करे या न करे। लेकिन चूँकि उसको यह देखने की उत्सुकता थी कि वह कैसा मनुष्य था जो इस किताब में इतना डूबा हुआ रहा था, अतः पुस्तक के दूसरे अंशों को देखने के लिए उसने कुछ देर और बैठ जाने का निश्चय किया। दवाफ़रोश शीघ्र ही आ गया; और जब मि० टोलमैन ने नवयुवती से उसका परिचय कराया, तो वह यथासम्भव उस स्थल को समझा देने के लिए झट राजी हो गया। अस्तु, मि० टोलमैन ने उसके लिए भीतर से एक कुर्सी लाकर रख दी, और वह भी अँगीठी के पास बैठ गया।

व्याख्या कठिन थी अवश्य, पर अन्त में वह पूरी हो गई। फिर युवती ने पुस्तक के व्यर्थ पड़ी रहने की बात चलाई। इस पर कुछ देर विवाद चलता रहा, लेकिन फल कुछ न निकला, यद्यपि मि० टोलमैन भी अपने तीसरे पहर का समाचारपत्र अलग रखकर इस विवाद में भाग लेने लगे थे, जिसमें अन्य बातों के बीच में उन्होंने यह भी कहा कि अब ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है कि उसके कारण उन्हें उस पुस्तक से आय नहीं हो रही है। लेकिन इस जोरदार दलील से भी कोई लाभ नहीं निकला। जब युवती उठकर चलने को हुई तो मि० टोलमैन ने कहा, "तो मैं बताऊँ कि मैं क्या चाहता हूँ जो आप लोग करें। जब आपको किताब देखने की इच्छा हो, आप यहाँ आयें और इस पुस्तक को यहीं पढ़ें। जो भी हो, मैं इसे एक वाचनालय बनाना चाहता हूँ। इससे मुझे अधिक साथी मिला करेंगे।"

इसके बाद जब कभी वह महिला वहाँ आती तो 'डॉर्मिटाक' को पढ़ती। और चूँकि उसकी छुट्टी उस परिवार की,

जिसमें कि वह पढ़ाती थी, लगातार अनुपस्थिति के कारण ब
गई थी, इसलिए उसके पास काफ़ी समय रहता और वह बहु
आती। दूकान में ग्लासको से उसकी भेंट अकसर हो जाती
और ऐसे अवसरों पर वे आम तौर से डॉर्मेस्टाक पढ़ा करते, औ
कभी-कभी सङ्गीत के विषय पर लम्बी बहसें हो जाया करतीं।
एक दिन पुस्तकालय के रास्ते में ही भेंट हो जाने से वे साथ-साथ
वहाँ आये और स्वरों के आरोहण तथा अवरोहण पर वार्तालाप
होता रहा, जो दूकान में कि युवती के ठहरने के समय तक चला।

"इन दोनों के लिए," मि० टोलमैन ने सोचा, "अच्छा यह
होगा कि ये लोग आपस में विवाह कर लें। तब वे दोनों इस
पुस्तक को ले जा सकेंगे और जी भरकर पढ़ सकेंगे। और वे
सचमुच एक-दूसरे के ख़ूब अनुरूप भी हैं, क्योंकि दोनों को ही
सङ्गीत के गणित और दर्शन से बड़ी दिलचस्पी है, यद्यपि दोनों
में से कोई भी गाना-बजाना नहीं जानता, जैसा कि उन्होंने
बताया है। यह बड़ी प्रशंसनीय जोड़ी होगी।"

मि० टोलमैन ने इस विषय पर ख़ूब सोच-विचार करके
अन्त में ग्लासको से कहने का निश्चय किया। उन्होंने जब
उससे इसका ज़िक्र किया तो वह नवयुवक शरमा गया और
अपना यह मन्तव्य ज़ाहिर किया कि इस विषय में सोचने से
कोई लाभ नहीं। लेकिन उसके व्यवहार और बाद के वार्तालाप
से यह स्पष्ट हो गया कि इसके विषय में उसने स्वयं भी विचार
किया था।

धीरे-धीरे मि० टोलमैन इस मामले में बहुत उत्सुक हो उठे
विशेषतः इस कारण और भी कि दवाफ़रोश इसमें स्वयं कुछ
भी करने के लिए तैयार नहीं जान पड़ता था। मौसम गर्म
होने लगा था। मि० टोलमैन ने सोचा कि वह छोटी
दुकान और वह मकान गर्मी की अपेक्षा शायद जाड़े में

अधिक सुख-चैन के थे। उस मकान के चारों तरफ़ उससे कहीं अधिक ऊँची इमारतें थीं, और उन्हें अब भी अनुभव होने लगा कि खुली वायु का सञ्चरण उतना ही सुखप्रद होगा जितना • पुस्तकों का सञ्चरण। उन्हें पड़ोसवाले नगर के अपने हवादार कमरों की काफ़ी याद आई। दोपहर बाद एक दिन उन्होंने कहा—"मि० ग्लासकौ, मैंने इस कारबार को शीघ्र ही बेच देने का निश्चय कर लिया है।"

"हें!" दूसरे ने आश्चर्य से कहा, "आपका मतलब है कि आप इसे छोड़-छाड़कर चले जायँगे—यह स्थान ही त्याग देंगे?"

"हाँ;" मि० टोलमैन ने उत्तर में कहा। "इस स्थान को बिल्कुल ही छोड़ दूँगा, और इस नगर से चला जाऊँगा।"

दवाफ़रोश को एक धक्का-सा लगा। उसने उस दूकान में बहुत सी सुखमय घड़ियाँ बिताई थीं। और अब तो उसका समय पहले की अपेक्षा और भी आनन्दमय होता जा रहा था। अगर मि० टोलमैन चले गये तो यह सब समाप्त हो जायगा। इस तरह की सुविधाओं की किसी नये मालिक-मकान से आशा नहीं की जा सकती।

"और यह सब सोचते हुए" मि० टोलमैन कहते गये, "मैं समझता हूँ कि यह आपके हित के लिए अच्छा होगा, कि जब तक मैं आपकी सहायता करने के लिए यहाँ हूँ, आप अपनी प्रेम-कहानी के एक निष्कर्ष पर पहुँच जायँ।"

"मेरी प्रेम-कहानी!" शरमाते हुए ग्लासकौ ने कहा।

"हाँ, निश्चय ही," मि० टोलमैन ने कहा, "मेरे आँखें हैं; मैं इसके बारे में सब जानता हूँ। अब मैं जो कुछ सोचता हूँ वह मुझे कहने दीजिए। जब एक काम करना ही होता है, तो पहला सुअवसर मिलते ही उसे कर देना चाहिए। अपना व्यवसाय मैं इसी ढङ्ग से चलाता हूँ। अस्तु, अच्छा होगा आप

कल तीसरे पहर मिस एडवर्ड्स से प्रस्ताव करने के लिए तैयार होकर यहाँ आयें। कल उन्हें आना चाहिए, क्योंकि इधर दो दिन से वह आई नहीं हैं; अगर न आईं, तो हम अगले दिन के लिए इस बात को स्थगित कर देंगे। लेकिन आपको कल तैयार हो जाना चाहिए। अगर आप उनसे यहाँ नहीं मिलते तो मुझे विश्वास नहीं कि आपसे उनकी अधिक भेंट हो सकेगी क्योंकि बहुत शीघ्र उस परिवार के लौट आने की आशा की जाती है, और उसकी बातचीत से उस परिवार के विषय में जो निष्कर्ष मैं निकालता हूँ, उससे यह साफ़ है कि आप वहाँ जाकर उनसे मिलने का विचार नहीं करेंगे।"

दवाफ़रोश इस बारे में सोच लेना चाहता था।

"इसमें सोचना कुछ नहीं है," मि० टोलमैन ने कहा, "उस महिला के बारे में हमें सब कुछ मालूम है।" (वह सत्य कह रहे थे; क्योंकि, इस मामले के सम्बन्ध में वे दोनों ओर का परिचय प्राप्त कर चुके थे।) "मेरी सलाह मानिए, और कल तीसरे पहर यहाँ आ जाइए—बल्कि और पहले आइए।"

दूसरे दिन सबेरे ही मि० टोलमैन अपने ऊपर के बड़े कमरे में गये और वहाँ से दो सर्वोत्तम नीली गद्देदार कुर्सियाँ नीचे उतार लाये, और उन्हें दुकान के पीछेवाले छोटे कमरे में रख दिया। वे दो-एक खेल-खिलौने भी उतार लाये, और उन्हें कार्निस पर सजा दिया। जितना कुछ उनसे हो सकता था उन्होंने कमरे को झाड़-पोंछकर ज़रा चमका दिया, यहाँ तक कि उन्होंने एक लाल कपड़ा भी बड़े कमरे से लाकर मेज पर बिछा दिया।

जब युवती महिला आई तो उन्होंने उसे पीछेवाले कमरे में कुछ नई आई हुई पुस्तकों के अवलोकन के लिए आमन्त्रित किया। अगर वह यह जानती होती कि इस धन्धे को छोड़ने का

उहोंने निश्चय कर लिया है, तब तो यह सोचकर उसको
आश्चर्य होता कि वह नई पुस्तकें क्यों ख़रीद रहे हैं; लेकिन
उसको उनके निश्चय के बारे में कुछ नहीं मालूम था। जब वह
उस मेज़ के सामने बैठ गई, जिस पर नई किताबें फैली हुई थीं,
तो मि० टोलमैन ग्लासको को आता देखने के लिए दुकान के
द्वार से बाहर निकल आये। शीघ्र ही वह दिखाई दिया।

"सीधे अन्दर चले जाओ," मि० टोलमैन ने कहा, "वह
पीछे के कमरे में हैं, किताब देख रही हैं। मैं यहीं रहूँगा, और
ग्राहकों को यथासम्भव बाहर ही निबटाता रहूँगा। यह सुहावना
समय है, और मैं थोड़ी ताज़ा हवा चाहता हूँ। मैं बीस मिनट
आपको दूँगा।"

ग्लासको का मुँह पीला हो गया, लेकिन वह एक शब्द भी
निकाले बिना अन्दर चला गया, और मि० टोलमैन अपने कोट
के पीछे हाथ डाले, पैरों को कुछ फ़ासले से जमाकर, दरवाज़े
की सीढ़ियों पर डटकर खड़े हो गये। वह बाहर के लोगों
को देखते हुए, और विस्मय करते हुए कि अन्दर के लोग क्या
कर रहे होंगे, कुछ देर तक वहीं खड़े रहे। वह छोटी लड़की,
जिसने उनसे दूध उधार लिया था और कभी लौटाया नहीं था,
इधर से होकर जाने को ही थी, कि उनको दरवाज़े पर खड़ा
देखकर सड़क के दूसरी तरफ़ से निकल गई। लेकिन उन्होंने
उसे देखा नहीं। वह इसी दुविधा में थे कि अन्दर जाने का
समय हो गया है अथवा नहीं। एक लड़का दरवाज़े तक
आया, और उसने जानना चाहा कि वह ईस्टर त्योहारवाले
अण्डे रखते हैं कि नहीं। बड़ी प्रसन्नता से मि० टोलमैन ने
कहा कि नहीं रखते। जब वह दवाफ़रोश को २० मिनट खूब
अच्छी तरह दे चुके तो भीतर गये; और साथ ही, दरवाज़े
की घण्टी को काफ़ी ज़ोर से बजाकर, जब वह दूकान के अन्दर

गये, तो पी० ग्लासको भीतर के कमरे की सीढ़ी से दो कदम नीचे उतरकर आया। उसके चेहरे से मालूम होता था कि मामला सब ठीक है।

इसके कुछ ही दिनों पश्चात् मि० टोलमैन ने अपना सब स्टाक, दूकान का नाम, उसकी स्थिर सम्पत्ति, फरनीचर और बयाने सहित सब, बेच डाला। और बेचा किसको—मि० ग्लासको को। इस तमाम मामले में यह बात सब से ज्यादा ख़ुशी की थी। कोई कारण नहीं था कि शीघ्र ही यह सुखी जोड़ा विवाहित न हो जाता; और उस युवती के लिए तो एक परिवार में अध्यापिका और अभिभावक का पद त्याग देने, और आकार उस मजे की छोटी सी बिसातखाने की दुकान और उस अद्भुत छोटे से मकान का अधिकार ग्रहण करने में (जिसमें कि उनकी जरूरत की लगभग सभी वस्तुएँ थीं) एक बड़ा हर्षपूर्ण आकर्षण था। दूकान की एक वस्तु को बेचना मि० टोलमैन ने अस्वीकार किया। वह थी 'डॉसेस्टाक' की महान् कृति। उन्होंने नवदम्पति को यह पुस्तक उपहार रूप में दी। उसके शुरू के पन्नों के बीच में उन्होंने एक बैंक-नोट रख दिया, जिसका मूल्य एक साधारण विवाहोपहार से कहीं अधिक था।

"आखिर आप स्वयं क्या करने जा रहे हैं," उन दोनों ने उनसे पूछा, जब ये सब बातें तय हो चुकीं। और तब उन्होंने उन्हें बताया कि उनका व्यवसाय क्या था और कैसे वह इस ग्राहकों के पुस्तकालय का प्रबन्ध करने आ गये थे। उन लोगों ने इसके लिए उन्हें सनकी नहीं समझा। जो व्यक्ति स्वरों के आरोहण और अवरोहण का अध्ययन करते हैं, वे किसी को सहसा पागल नहीं कहेंगे। जब मि० टोलमैन लौटकर पुसे एण्ड कं० के कारबार में वापिस आये, तो उन्होंने देखा कि सब काम सन्तोषजनक रूप से चला जा रहा है।

...न, आप १० वर्ष उम्र में अब कम मालूम हो रहे हैं," मि० ...टरफील्ड ने कहा। "आपका समय तो अवश्य बड़े आनन्द से कटा होगा। मैं तो नहीं सोचता था कि......मैं ...के मनोविनोद के लिए इतनी काफी चीजें होंगी—और सो भी इतने अर्से तक के लिए!"

"मेरे मनोविनोद की!" साश्चर्य मि० टोलमैन ने कहा, "क्यों नहीं, मैं तो मनोविनोद की वस्तुओं से घिरा हुआ था। अपने जीवन भर में मुझे इससे अच्छा छुट्टी का अवकाश कभी नहीं मिला।"

जब उस दिन शाम को वह घर गये (और घर जाने की उन्होंने अपने अन्दर खूब इच्छा पाई) तो उन्होंने उस वसीयत-नामे को फाड़ डाला, जो उन्होंने लिखा था। उन्हें लगा कि अपनी साधारण सहज बुद्धि प्रमाणित करने की उन्हें अब कोई आवश्यकता नहीं रही है।